राजस्थान पुरातन ग्रन्थमाला
प्रधान सम्पादक – पद्मश्री जिनविजय मुनि, पुरातत्त्वाचार्य

★

ग्रन्थाङ्क ८

महाकवि उदयराज विरचितं

राजविनोदमहाकाव्यम्

★

राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर (राज.)

महाकवि उदयराज विरचित

राजविनोदमहाकाव्यम्

प्रकाशक :

राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर

राजस्थान पुरातन ग्रन्थमाला

ग्रन्थांक ८

महाकवि उदयराज विरचित

राजविनोदमहाकाव्यम्

सम्पादक

गोपालनारायण बहुरा

प्रकाशक

राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर

प्रकाशक :
निदेशालय
राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान
पी.डब्ल्यू.डी. रोड, जोधपुर
फोन : 0291-2430244
फैक्स : 0291-2637646

प्रथमावृत्ति : 1956 (वि.सं. 2013)
द्वितीयावृत्ति : 2011 (वि.सं. 2067)

मूल्य : बयालिस रुपये मात्र (₹ 42.00)

राज. प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान के लिए
अरिहन्त प्रकाशन द्वारा मुद्रित

RAJVINOD MAHAKAVYAM

By **Gopalnarayan Bahura**

Published by : **Rajathan Oriental Research Institution,** Jodhpur

Second Edition : 2011 Price ₹ : 42.00

निदेशकीय

गुजरात के सुल्तान महमूद बेगड़ा के जीवन चरित्र पर आधारित एक ऐतिहासिक महाकाव्य राजविनोद का प्रकाशन सन् 1956 में पुरातन ग्रन्थ माला के आठवें पुष्प के रूप में प्रकाशित किया गया था। यह महाकाव्य अनेक ऐतिहासिक पुरुषों के साथ ही मध्यकालीन सामाजिक एवं सांस्कृतिक प्रचुर सामग्री को उद्घाटित करता है।

प्रस्तुत पुस्तक की शोध अध्येताओं के समक्ष मांग बढ़ने से इसको पुन: प्रकाशित करते हुए मुझे प्रसन्नता की अनुभूति हो रही है। मुझे विश्वास है पुस्तक का द्वितीय संस्करण अन्वेषण करने वाले शोधोत्सुकों के लिए उपयोगी सिद्ध होगा।

श्यामसिंह राजपुरोहित आर.ए.एस.
निदेशक
राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान
जोधपुर

प्रकाशकीय वक्तव्य

प्रस्तुत "राजविनोद" काव्य की रचना कवि उदयराज द्वारा अहमदाबाद के सुप्रसिद्ध सुलतान महमूद बेगड़ा के यशोवर्णन के रूप में हुई है। महमूद बेगड़ा गुजरात का एक महाप्रतापी शूरवीर और कर्त्तव्यपरायण नरेश हो गया है, जिसका वर्णन सम्बन्धित इतिहासों में विस्तार से मिलता है। उदयराज महमूद बेगड़ा का आश्रित एक संस्कृत कवि था। तत्प्रणीत "राजविनोद" द्वारा मध्यकालीन भारतीय इतिहास के कई नवीन तथ्यों पर प्रकाश पड़ता है तथा राजस्थान की तात्कालिक स्थिति आदि के विषय में भी कितनी ही सूचनाएं प्राप्त होती हैं। सर्व प्रथम डाक्टर बूलर के सन् 1875 ई. में बम्बई सरकार के लिये "राजविनोद" की प्रति प्राप्त कर इसका महत्त्व प्रदर्शित किया था। तब से इसके प्रकाशन की आवश्यकता बनी हुई थी।

भाण्डारकर रिसर्च इंस्टीट्यूट, पूना में हमारा जाना हुआ तो वहां पर सुरक्षित बम्बई सरकार के ग्रन्थ-संग्रह से "राजविनोद" की प्रति प्रकाशन के लिये हम अपने साथ ले आए। राजस्थान सरकार द्वारा जयपुर में "राजस्थान पुरातत्त्व मन्दिर" की स्थापना होने पर श्री गोपालनारायण जी बहुरा हमारे सम्पर्क में आये और हमने इनकी साहित्यिक रुचि देख कर "राजविनोद" के सम्पादन का कार्य इनको सौंप दिया। इन्होंने प्रास्ताविक परिचय के साथ-साथ ऐतिहासिक ग्रन्थों के आधार पर महमूद बेगड़ा का वंश-परिचय तथा डॉ. एच.डी. सांकलिया के दोहाद के शिलालेख का अनुवाद और अनुक्रमणिका आदि से इसे समन्वित करके पुस्तक की उपयोगिता को संवर्धित कर दिया है।

"राजस्थान पुरातन ग्रन्थ माला" के 8वें पुष्प के रूप में प्रस्तुत रचना को प्रकाशित करते हुए हमें परम प्रसन्नता हो रहा है। इति।

मुनि जिनविजय
सम्मान्य संचालक
राजस्थान पुरातत्वान्वेषण मंदिर,
जयपुर

जयपुर
ज्येष्ठ कृष्णा 7
वि.सं. 2013

प्रास्ताविक परिचय

डाक्टर बूलर ने सन् १८७५ ई० में बम्बई सरकार के लिये 'राजविनोद' नामक काव्य की एक हस्तलिखित प्रति* प्राप्त की। इस काव्य में अहमदाबाद के सुलतान महमूद बेगड़ा के जीवन चरित्र का वर्णन मिलता है।† यह ऐतिहासिक काव्य अभी तक प्रकाशित नहीं हुआ है। डाक्टर बूलर ने 'संस्कृत के हस्तलिखित ग्रन्थों की रिपोर्ट (१८७४-७५) में इस काव्य को एक साहित्यिक विनोद बतलाते हुए इस प्रकार लिखा है :—"उदयराज विरचित 'राजविनोद' अथवा 'ज़र बक्स पातसाहि श्री महमूद सुरत्राणचरित्र', जिसमें अहमदाबाद के सुलतान महमूद बेगड़ा का जीवन-चरित्र वर्णित है, एक विशुद्ध साहित्यिक विनोद है। प्रयागदास के पुत्र और रामदास के शिष्य उदयराज ने महमूद की प्रशंसा करते हुए उसको महान् पराक्रमी, प्रतापी और हिन्दू धर्म

---

* प्रति सं० १८। १८७४–७५ ई० (भा० ओ० रि० इ०)

† बेगड़ा का जन्म १४४५ ई० में हुआ था। उसका नाम फ़तहख़ाँ था। वह १४५८ से १५११ ई० तक ५३ वर्ष गुजरात का सुलतान रहा। उसके समय की कुछ मुख्य मुख्य घटनायें इस प्रकार हैं:—

१४६७–७० ई० जूनागढ़ का युद्ध।

१४७२ ई० कच्छ और सिन्ध पर आक्रमण।

१४७३ ई० द्वारका पर अधिकार; मन्दिर का तोड़ना।

१४६५ ई० महमूद द्वारा बहरोट, पारनेर के किलों और दम्मन के बन्दरगाह पर अधिकार करने के लिये सेना भेजना। महमूद के सेनानायक अल्पखान द्वारा संजान की पारसी बस्ती का ध्वंस (१४६५ अथवा १४९१ ई०)।

१४७९ ई० वातरक पर महमूदाबाद का बसाना।
रानपुर विजय।

१४८२–८४ ई० चम्पानेर की लड़ाई। पावागढ़ का २० महीने तक घेरा।

१४८४ ई० (नवम्बर) पावागढ़ पर आक्रमण और विजय।

१४९१–९४ ई० बहमनी राज्य के बहादुर गिलानी द्वारा गुजरात के समुद्री किनारे पर हमले। गिलानी को पराजित करके मार डाला गया।

१५०८ ई० खान देश के तख्त पर महमूद द्वारा अपने आदमी को बिठाना।

१५०८–९ ई० चौल और दीव पर पुर्तगालियों से झगड़ा।

१५११ ई० (२३ नवम्बर) महमूद की ६७ वर्ष की अवस्था में मृत्यु। उसकी मृत्यु के थोड़ी ही देर पहले महमूद को दिल्लीश्वर की ओर से भेंट प्राप्त हुई। (पृ० २०७)।
(कोमिसरियट—History of Gujrat, Vol. I (1938) P. 130)

का रक्षक वतलाया है, मानो वह कोई कट्टर हिन्दू राजा हो । कवि ने क्षत्रिय राजा के समान वर्णन करते हुए लिखा है कि वह राजन्यचूड़ामणि है, श्री और सरस्वती दोनों उसकी सेवा करती हैं, दानवीरता में वह कर्ण से भी वढ़ कर है और उसके पूर्वज मुज़फ्फरखाँ ने श्रीकृष्ण की कलिकाल के विरुद्ध सहायता की थी । यह चरित्र सात सर्गों में वर्णित है । पहले सर्ग में २९ श्लोक हैं और इसमें सुरेन्द्र-सरस्वती-सम्वाद रूप से काव्य की भूमिका बाँधते हुए यह वर्णन किया है कि ब्रह्मा ने इन्द्र को सरस्वती की खोज करने के लिये भेजा । इन्द्र ने उसे महमूदशाह के सभामण्डप में पाया । सरस्वती ने अपने वहाँ रहने का कारण बताते हुए महमूद का कीर्तिगान किया । दूसरे सर्ग का नाम 'वंशानुकीर्त्तन' है । इसमें ३१ श्लोक हैं और महमूदशाह की वंशपरम्परा का वर्णन है । इसमें दिया हुआ वंशानुक्रम इतिहास के अनुसार सही ज्ञात होता है । "सभा समागम' नामक तीसरे सर्ग में ३३ श्लोकों में महमूद के सभा प्रवेश का वर्णन है । दरबार में कौन-कौन से राजा और सभ्य उपस्थित होते थे, इसका वर्णन सर्वावसर नामक चतुर्थ सर्ग में ३३ श्लोकों में किया गया है । पाँचवें सर्ग में सङ्गीतरङ्गप्रसङ्ग का ३५ श्लोकों में वर्णन है और छठे सर्ग में विजययात्रोत्सव वर्णन के ३६ श्लोक हैं । सातवें सर्ग का नाम 'विजय लक्ष्मीलाभ' है और इसमें ३७ श्लोकों में महमूद के सामरिक पराक्रम का वर्णन है । पातशाह की उदारता के अतिशयोक्तिपूर्ण वर्णन से ज्ञात होता है कि कवि को उसके दरवार से पर्याप्त दक्षिणा मिली होगी अथवा मिलने की आशा रही होगी ।"

अहमदावाद के प्रसिद्ध सुलतान महमूद बेगड़ा (१४५८ ई० १५११ ई०) के दरवारी कवि उदयराज विरचित ऐतिहासिक काव्य की इस दुर्लभ प्रति* पर यह टिप्पणी पर्याप्त नहीं है । सामान्यतः गुजरात के इतिहास और विशेषतः गुजरात के सुलतानों के इतिहास में रुचि रखनेवाले एवं अन्य साहित्यिक अभिरुचि वाले विद्वानों के परिचय के लिए यह दुष्प्राप्य ग्रन्थ प्रकाशित किया जा रहा है । इसकी प्रति† भाण्डारकर ओरियण्टल रिसर्च इंस्टीट्यूट पूना से प्राप्त की गई है और इसी संस्थान के संग्रहाध्यक्ष श्री पी० के० गोडे के मन्तव्यानुसार इस काव्य को आवश्यक टिप्पणियों सहित प्रस्तुत किया गया है ।

राजविनोद के प्रत्येक सर्ग के अन्त में निम्नलिखित पद्य दिया हुआ है जिसमें सुलतान महमूद के वंशानुक्रम का वर्णन है:—

श्रीमान् साहिमुदफ्फरः समजनि श्रीगूर्ज्जरक्ष्मापति—
स्तस्मात्साहि महम्मदस्समभवत्साहिस्ततोऽहम्मदः ।
जातः साहिमहम्मदोऽस्य तनुजो गायासदीनाख्यया
ख्यातः श्रीमहमूदसाहिनृपतिर्जीयात्तदीयात्मजः ॥

एपिग्राफिका इन्डिका जि० २४ भाग ५, जनवरी १९३८ पृ० २१२ पर डाक्टर एच. डी.

---

* आफ्रेट ने 'राजविनोद' की भाण्डारकर संग्रहालयवाली प्रति के अतिरिक्त और किसी प्रति का उल्लेख नहीं किया है । (C. C. I. 502). कृष्णमाचारि ने भी History of Classical Sanskrit Literature, Madrass, 1937 P. 271, 433 में इसी एक प्रति का उल्लेख किया है ।

† गव्हर्नमैन्ट मैनिस्क्रिप्ट लाइब्रेरी, भा. ओ रि इ. पूना, सं० १८ । १८७४-७५ ।

सांकलिया द्वारा सम्पादित दोहाद का एक शिलालेख प्रकाशित हुआ है। महमूद बेगड़ा का यह लेख विक्रम सम्वत् १५४५ शक सम्वत् १४१० (१४८८ ई०) का है। इस लेख में दिए हुए वंशानुक्रम और ऊपर दिये हुए पद्यान्तर्गत क्रम को इस प्रकार मिलाया जा सकता है:—

राजविनोद (१४५८–१५११ ई०)	दोहाद का शिलालेख (१४८८ ई०)
१—साहि मुदफ्फर (१३९२-१४१० ई०)	१—शाहिमुदाफर
२—साहि महम्मद (१) का पुत्र (तस्मात्समभवत्)।	२—महम्मद (१) का पुत्र (तत्पुत्र:)।
३—साहि अहम्मद: (१४११–१४४२ ई०) इसके बाद (तत:)।	३—अहम्मद (इसका वंशज) 'तस्यान्वये प्रसूत:'
४—साहि महम्मद (३) का पुत्र (तस्य.तनुज: जात:) '१४४२-१४५१ ई०।	४—साह महम्मद (३) का पुत्र (तस्माद-भूत्)।
५—महमूदसाहि (४) का पुत्र 'तदीयात्मज:' (१४५८-१५११ ई०)।	४—साह महमूद 'अन्वये जात:'

इन वंशावलियों से विदित होगा कि चार पीढ़ी के नाम तो ज्यों के त्यों मिलते हैं केवल महमूद (बेगड़ा) को राजविनोद में तो महम्मद का पुत्र लिखा है 'जीयात्तदीयात्मज:' और दोहाद के शिलालेख में उसको साह महम्मद का वंशज 'तस्यान्वये जात:' लिखा है। डाक्टर सांकलिया ने मुसलमान इतिहासकारों के आधार पर इन सुलतानों का वंशानुक्रम* इस प्रकार लिखा है—(१) मुज़फ्फरशाह (मुज़फ्फर १), २—अहमदशाह (अहमद), (३) उसका पुत्र मुहम्मदशाह (मुहम्मद), (४) उसका पुत्र क़ुतुबुद्दीन (क़ुतुबुद्दीन अहमदशाह), (५) दाऊद और (६) महमूद १, मुहम्मदशाह का द्वितीय पुत्र।

सम्वत् १५८७ में पण्डित विवेकधीरगणि नामक जैन विद्वान् ने शत्रुञ्जयतीर्थोद्धार-प्रबन्ध नामक एक ऐतिहासिक प्रबन्ध की रचना की है जिसका सम्पादन मुनि श्रीजिनविजयजी ने करके सम्वत् १९७३ में भावनगर की जैन आत्मानन्द सभा द्वारा प्रकाशित कराया है। सम्वत् १५८७ में चित्तौड़ के रहनेवाले ओसवाल जाति के कर्माशाह ने लाखों रुपये खर्च करके शत्रुञ्जय के मुख्य मन्दिर का जीर्णोद्धार कराया और उसका प्रतिष्ठा महोत्सव किया। उस समय वहाँ पर गुजरात के सुलतान बहादुरशाह का राज्य था। इसी बहादुरशाह की आज्ञा प्राप्त करके यह जीर्णोद्धार कार्य सम्पन्न किया गया था। इसलिये इस ऐतिहासिक प्रवन्ध में गुजरात के इन सुलतानों का संक्षेप में वंश वर्णन दिया गया है। बहादुरशाह, जिसके समय में जीर्णोद्धार कार्य सम्पन्न हुआ, प्रस्तुत राजविनोद काव्य में वर्णित महमूदशाह अर्थात् महमूद बेगड़ा का पौत्र था। इसलिये इसमें इसके वंश का उल्लेख होना स्वाभाविक है। इस ऐतिहासिक प्रबन्ध में गुजरात के सुलतानों के वंशानुक्रम के विषय में निम्नलिखित श्लोक मिलते हैं:—

---

* एपिग्राफिया इन्डिका, जनवरी १९३८, पृ० २१४।

पीरोजशाहेः समयेऽथ जज्ञे श्रीगूर्जरत्रा भुवि पादशाहिः ।
मुज्जफुराह्वः (१) खगुणाब्धिचन्द्रमितेषु (१४३०) वर्षेषु च विक्रमार्कात् ।।१४।।

अहिमदशाहिर्जज्ञे (२) तत आशेष्वब्धिचन्द्रमितवर्षे (१४५४)
दिग्रसवेदेन्द्वब्दे (१४६८) योऽस्थापयदहिमदाबादम् ।।१५।।

महिमुन्द (३) कुतुबदीनौ (४) शाहिमहिमुंद (५) वेगडस्तबनु ।
यो जीर्णदुर्गचम्पकदुर्गौ जग्राह युद्धेन ।।१६।।

उल्लास २; पृ० १३ ।

इतिहास के विशेषज्ञ इन वंशावलियों की छानबीन करके इन पर विशेष प्रकाश डालेंगे ।

राजविनोद महाकाव्य का रचयिता उदयराज अवश्य ही महमूद का दरबारी कवि था क्योंकि उसने इस काव्य में उसकी भूरि-भूरि प्रशंसा की है। यह विचारणीय है कि धार्मिक कट्टरता के लिये प्रसिद्ध महमूद ने* उदयराज जैसे हिन्दू पण्डित को अपने आश्रय में कैसे रक्खा । यों तो इस काव्य के रचनाकाल का निर्धारण करने के लिये यह कहा जा सकता है कि महमूद के शासन काल १४५८ ई० से १५११ ई० के बीच में ही यह लिखा गया था परन्तु अवश्य ही यह उस समय रचा गया होगा जब महमूद का भाग्य उदय के शिखर पर पहुँच चुका था। प्रस्तुत काव्य के चतुर्थ सर्ग में उन सभी राजाओं का वर्णन आया है जिनको महमूद ने अपने आधीन कर लिया था । इसके अतिरिक्त अलग अलग राजाओं के पद और सम्मान आदि का भी इस सर्ग के पद्यों से पता चलता है:—

"राज्ञोऽस्य वेत्रधरदत्तपदावकाशान्देशाधिपान् सदसि कृतप्रवेशान् ।"

१, स० ४

इस प्रसङ्ग में मालवराज और दक्षिणनृप का वर्णन इस प्रकार है:—

'वेषं विशेषरुचिरं दधतादरेण हस्तारविन्दसमुदञ्चितचामरेण ।
राजा विराजतितरां परिहृष्यमानो गोष्ठीषु दक्षिणनृपेन विचक्षणेन ।।१०।। स० ४.

एतस्य चण्डभुजदण्डपराक्रमेण निःशेषखण्डितरणाङ्गणशौण्डभावः ।
सर्वस्वमेव निजजीवितरक्षणाय दण्डं समर्प्पयति मालवमण्डलेशः ।।११।। स० ४

फिर ७ वें सर्ग में 'मालव' के लिए लिखा है:—

"त्यक्त्वा लुंठितदेशकोशविषयो प्राग्दुर्गमानग्रहं
राजन् जीवितमात्रलाभमधुना कांक्षत्यसौ मालवः ।।२६।।

सम्भवतः दक्षिण के निज़ामशाह पर जब मालवा के महमूद खिलजी ने १४६२-६३ ई० में हमला किया तब सुलतान महमूद (वेगडा) ने जो मालवा के विरुद्ध सैनिक सहायता दी थी,

---

* महमूद ने अपने आज्ञाकारी गिरनार के माण्डलिक राजा को इस्लाम धर्म ग्रहण करने के लिये बाध्य किया । (देखो डा. एस. के. बनर्जी कृत 'हुमायूं बादशाह' संस्करण १९३८ पृ० ११२ और कैम्ब्रिज हिस्ट्री ऑफ़ इण्डिया, भा० ३, पृ० ३०५) ।

यहाँ उसी से अभिप्राय है; यदि यह सच है तो यह काव्य १४६३ ई० के बाद का रचा हुआ होना चाहिए ।

इसी चतुर्थ सर्ग के बारहवें श्लोक में मेवाड़ के राणा कुम्भा का वर्णन है:—

"यः पार्थिवः खलु कुम्भकर्णः कर्णेन वर्णमुचितं सहते तुलायाः ।
सोऽयं करोति महमूदनृपस्य सेवां दण्डे वितीर्णवरभूरिसुवर्णभारः ।।१२।।

इसके अतिरिक्त सातवें सर्ग में भी मेदपाट के राजा का ज़िकर है । इससे स्पष्ट है कि महमूद और राणा कुम्भा समकालीन थे । राणा कुम्भा* ने १४३३ से १४६८ ई० तक राज्य किया था । इससे अनुमान लगाया जा सकता है कि "राज विनोद" का रचना काल १४६२ से १४६९ के बीच में है ।

दोहाद के शिलालेख (१४८८ ई०) में बहुत सी उन घटनाओं का भी उल्लेख मिलता है जिनका राजविनोद में कोई वर्णन नहीं है । यदि राजविनोद के रचना काल के विषय में उपरोक्त अनुमान ठीक मान लिया जावे तो इसका समाधान सहज ही में हो सकता है । क्योंकि शिलालेख का समय राज विनोद के समय से लगभग २० वर्ष बाद का है जिसमें महमूद के १४५८ ई० से १४८८ ई० तक ३० वर्षों के राज्यकाल का वर्णन मिलता है ।

दोहाद के शिलालेख की भाषा, शैली और विषय को देखते हुए यह भी एक धारणा बनती है कि सम्भवतः राजविनोद नामक ऐतिहासिक काव्य और दोहाद के शिलालेख, दोनों का रचयिता एक ही हो । इन दोनों की समानता के कुछ अंश इस प्रकार हैं:—

---

* महाराणा कुम्भा वि० सं० १४९० (ई० सं० १४३३) में चित्तौड़ के राजसिंहासन पर बैठा ।..............पिछले दिनों में महाराणा को उन्माद रोग हो गया था ।...... एक दिन वह कुम्भलगढ़ में मामादेव (कुम्भ स्वामी) के मन्दिर के पास जलाशय के तट पर बैठा हुआ था उस समय उसके राज्यलोभी पुत्र ऊदा (उदयसिंह) ने कटार से उसे अचानक मार डाला । यह घटना वि० सं० १५२५ (ई० सं० १४६८) में हुई । (श्री गौरीशंकर हीराचन्द ओझा कृत 'राजपूताने का इतिहास' पृ० ६३३–६३४) इस सम्बन्ध में देखिए—मुहाणोत नैणसी की ख्यात, पत्र १२, पृ० १ । वीर विनोद, भा० १ पृ० ३३४ ।

इतिहास और शिलालेखों के आधार पर महमूद और राणा कुम्भा में कोई लड़ाई होना अथवा राणा का उसके आधीन होना नहीं पाया जाता है । महमूद के पूर्वज क़ुतुबुद्दीन से अवश्य ही कुम्भा का युद्ध हुआ था जबकि उसने मालवा के महमूदशाह के साथ मिल कर चित्तौड़ पर आक्रमण किया था । इस युद्ध में क़ुतुबुद्दीन और मालवा का सुलतान दोनों ही राणा से हार कर अपने अपने देशों को लौट गए थे । (देखिए—वि० सं० १५१७ (ई० स० १४६०) मार्ग० बु० ५ का कीर्तिस्तम्भप्रशस्ति लेख) ।

प्रस्तुत काव्य में कवि परम्परा के अनुसार ही कवि ने अपने प्रशंसनीय सुलतान के समकालीन, प्रसिद्ध और पराक्रमी कुम्भा को उसके आधीन होना लिख दिया है । डा० साँकलिया द्वारा सम्पादित दोहाद के शिलालेख में भी कुम्भा का महमूद के साथ कोई सम्बन्ध वर्णित नहीं है । (सं०) ।

उदयराजकृत राजविनोद	दोहाद का शिलालेख
१—काव्य पद्यात्मक है ।	१—लेख पद्यात्मक है ।
२—काव्य की भाषा संस्कृत है ।	२—लेख संस्कृत भाषा में है ।
३—काव्य की हस्तलिखित प्रति डा० बूलर ने गुजरात में प्राप्त की ।	३—लेख बड़ौदा से उत्तर-पूर्व में ७७ मील पर दोहाद में प्राप्त हुआ ।
४—राजविनोद की हस्तलिखित प्रति में सन् सम्वत् नहीं दिया हुआ है परन्तु लेख व पृष्ठ मात्रा के आधार पर १५०० और १६०० ई० के बीच की लिखी ज्ञात होती है ।	४—शिलालेख विक्रम सम्वत् १५४५ शक सम्वत् १४१० (२४ आपरेल, १४८८ ई०) का लिखा हुआ है ।
५—राजविनोद महमूद बेगडा के शासन-काल (१४५८ से १५११ ई०) में ही रचा गया था । अथवा, जैसे कि ऊपर अनुमान लगाया गया है १४६३ से १४६६ के बीच में लिखा गया था ।	५—शिलालेख भी महमूद बेगडा के शासन काल में ही उसके राज्यारोहण के समय से लगभग ३० वर्ष बाद १४८८ ई० में लिखा गया था ।
६—राजविनोद सरस्वती वन्दना से आरम्भ होता है । प्रथम सर्ग को सुरेन्द्र सरस्वती-सम्वाद नाम दिया गया है । वास्तव में, सम्पूर्ण काव्य ही सरस्वती के द्वारा अभिगीत है । 'महमूदपातसाहेः अभिनववर्णने प्रसक्ता सरस्वती सरसपदानि व्यतानीत् ॥३२॥ स० ४ ।	६—शिलालेख भी काश्मीरवासिनीदेवी अर्थात् सरस्वती की वन्दना से प्रारम्भ होता है । (डा० साँकलिया का नोट एपि० इंडिका जन० १९३८ पृ० २१३) । डा० साँकलिया का कथन है कि यह देवी ब्राह्मी अथवा सरस्वती प्रतीत होती है । राजविनोद में भी सरस्वती को 'ब्राह्मि' नाम से सम्बोधित किया है । (पद्य २ सर्ग २रा)
७—राजविनोद में दिया हुआ बेगड़ा का वंशानुक्रम इस प्रकार है:— मुदफ्फर, महम्मद, (१) अहम्मद, महम्मद, (२) महमूद । यह वंशानुक्रम मुसलमान इतिहासकारों के आधार से भिन्न है ।	७—शिलालेख में दिया हुआ वंशानुक्रम भी इस प्रकार है:— मुदाफर, महंमद, (१) अहंमद, महम्मद, (२) महमूद । यह वंशानुक्रम भी मुस्लिम इतिहास-कारों द्वारा दिये हुये वंशानुक्रम से भिन्न है ।
८—राजविनोद के दूसरे सर्ग के ३० पद्यों में महमूद के पूर्वजों के पराक्रम का वर्णन	८—शिलालेख में कुल २६ पद्य हैं जिनमें से पहले ६ पद्यों में तो महमूद के पूर्वजों

उदयराजकृत राजविनोद

है। शेष सर्गों में स्वयं महमूद के पराक्रमों (१४५८ से १४६६ ई० तक) का वर्णन है।

९—प्रथम सर्ग के तीसरे पद्य में कवि ने लिखा है कि "पूजोपहाराय मयोपनीतः कवित्वपुष्पञ्जलिरेष रम्यः।" इससे विदित होता है कि महमूद की कृपा प्राप्त करने के लिये (सम्भवतः) उसके दरबार में प्रवेश पाने के लिये ही यह काव्य लिखा गया था।

१०—राजविनोद में महमूद के पूर्वज अहमद को अहमदेन्द्र लिखा है। (पृ० ५ व ६)

११—राज विनोद, सर्ग २, पद्य १८ में महमूद द्वारा पावागढ़ पर आक्रमण करने का वर्णन है:—

"यस्य प्रतापभरपावकसङ्गमेन
दग्धस्य पावकगिरेः शिखरान्तरेषु।
प्रेक्षन्त जर्ज्जरसुधाविधुराणि भस्म-
राशिप्रभाभि रिपवो निजमन्दिराणि॥"

दोहाद का शिलालेख

का वर्णन है और शेष २० पद्यों में महमूद के राज्यकाल में १४५८ ई० से १४८८ ई० तक की घटनाओं का वर्णन है।

९—शिलालेख की रचना का प्रकार प्रायः राजविनोद के समान ही है। ऐसा प्रतीत होता है कि राजविनोद के कर्ता ने ही बहुत समय तक सुलतान की कृपा का उपभोग कर चुकने के बाद इसकी रचना की थी। शिलालेख में बहुत से ऐसे पुरुषों और स्थानों का उल्लेख है जिनका राजविनोद में वर्णन नहीं है। अतः स्पष्ट है कि यह राजविनोद के रचनाकाल से शिलालेख के समय (१४८८ ई०) तक की घटनाओं का वर्णन उसी कवि ने इस लेख में किया है।

१०—शिलालेख में भी अहमद को अहमदेन्द्र लिखा है। (पद्य ४)

११—शिलालेख में पावकदुर्ग पर (नवम्बर १४८४ ई०) चढ़ाई का उल्लेख यों किया है:—

"जित्वा पावकं (दुर्गं) पित्रारुद्धं
प्रतापतापूर्वं ॥१०॥
महमूदमहीपालप्रतापेनैव पावकम्।
प्रविश्य ज्वालितं सर्वं वैरिवृन्दं पतंगवत्॥११॥
जीवंतं तत्पतिं (बद्ध्वा) दुर्गं नीत्वा
महाबलं।
चकार तत्पुरे राज्यं महमूदमहीश्वरः॥१२॥

डा० सांकलिया ने लिखा है कि पावागढ़ लेने के लिये अहमद का प्रयत्न असफल हुआ था। (एपि० इण्डि०, जन० १९३८ पृ० ३२१।

उदयराजकृत राजविनोद

१२—मुदफ्फर के पुत्र महंमद के विषय में वर्णन करते हुए राजविनोद (सर्ग २ प० १०) में नन्दपद और पल्लिवन का उल्लेख है:—

"आद्याप्यहो नन्दपदाधिनाथा भल्लूकवत्पल्लिवने भ्रमन्ति" ।।६।।

फिर, नन्दपद के राजाओं के विषय में लिखा है:—

'विभिन्नप्राकारसौधस्फुरद्देहमाला:'

यहाँ 'विभिन्न प्राकार' पद से विदित होता है कि पल्लिवनान्तर्गत नन्दपद में उस समय कोई किला भी था ।

यहाँ मुदफ्फर के पुत्र महम्मद के समय के पल्लिवन से तात्पर्य्य है ।

१३—राजविनोद में 'गायासदीन' उपाधि का प्रयोग महमूद वेगड़ा के पिता महम्मद के लिए हुआ है:—

"गायासदीन इति साहि महंमदेन्द्र:"

दोहाद का शिलालेख

१२—दोहाद शिलालेख के पद्य १८ में पल्लिदेश का उल्लेख है । इस देश पर वेगड़ा सुलतान के मुख्य मन्त्री इमादल का शासन था—

"पल्लीदेशाधिकारं च पुण्यं पुण्यमतिस्तदा दुष्टारिहृदये राज्यं दुर्गमेनं चकार वै ।।१८।।"

डा० साँकलिया का मत है कि गोधरा तालुका में पाली नामक स्थान ही पल्लि देश है ।

पल्लीवन और पल्लिदेश एक ही हैं ।

यहाँ वेगड़ा के समय के पल्लि देश से तात्पर्य है ।

१३—दोहाद शिलालेख के पद्य ७ में—"श्री ग्यास (दीन) प्रभो: अन्वये साह श्री महमूद वीर नृपति:. . . जात:" लिखा है । यह भी महमूद के पिता ही की उपाधि है, महमूद की नहीं, जैसाकि पद्य पढ़ने से प्रतीत होता है ।

महमूद को सिक्कों और लेखों में 'नासिर उद्दुनियाँ वा-उद्-दीन' (संसार और धर्म का रक्षक) लिखा है ।

अहमद (१) के पुत्र महंमद (२) को भी सिक्कों में ग़ायासउद्दीन लिखा है । (एपि० इन्डि० जन० १९३८ पृ० २१६)

इस प्रकार दोहाद के शिलालेख और राजविनोद काव्य की तुलना करने मे हम नीचे लिखे निष्कर्षों पर पहुँचते हैं:—

(१) प्रयागदास का पुत्र उदयराज महमूद वेगड़ा (१४५८-१५११ ई०) का हिन्दू राजकवि था ।

(२) उदयराज ने यह सप्तसर्गात्मक 'राजविनोद महाकाव्य' संस्कृत में लिखा है और इसमें महमूद वेगडा व उसके पूर्वजों का वर्णन है । यह काव्य वेगड़ा के राज्य के पहले दस वर्षों (१४५८–१४६९) में लिखा गया था ।

(३) इसके बाद भी दो दशकों तक वह महमूद के दरबार में ही रहा और उसके पूर्वजों व उसके पराक्रमों के वर्णन में अभिरुचि रखता रहा।

(४) राजविनोद और दोहाद के शिलालेख की तुलना से यह धारणा बनती है कि यह शिलालेख इसी कवि की पूर्व रचना की संक्षिप्त और सम्पूर्ण आवृत्तिमात्र है।

'एपिग्राफिआ इन्डिका' जनवरी, सन् १९३८, भाग २४ अंक ४ में यह लेख इसके मूल सम्पादक डाक्टर एच० डी० साँकलिया की टिप्पणी सहित प्रकाशित हुआ है जो बहुत महत्त्वपूर्ण है। उक्त लेख को ज्यों का त्यों एवं डाक्टर साँकलिया की टिप्पणी का अनुवाद, आवश्यक टिप्पणियों सहित, इसी पुस्तक में पृष्ठ २३ से प्रकाशित किया जा रहा है।

जैसा कि ऊपर सूचित किया गया है इस काव्य की एकमात्र प्राचीन हस्तलिखित प्रति बम्बई सरकार के संग्रहालय की सम्पत्तिरूप है जो पूना के भाण्डारकर ओरिएन्टल रिसर्च इन्स्टीट्यूट में सुरक्षित है। इस प्रति के कुल २८ पन्ने हैं। इसके लिखे जाने का कोई समयोल्लेख प्रति में नहीं दिया गया है। इससे यह तो निश्चित नहीं कहा जा सकता कि यह किस समय में लिखी गई होगी परन्तु, प्रति की जीर्ण-शीर्ण अवस्था देखते हुए प्रतीत होता है कि यह प्रायः रचनाकाल के बहुत पीछे लिखी हुई नहीं है; और यह तो निश्चित ही है कि उसी शताब्दी में लिखी हुई तो अवश्य है। इसको किसी राम नामक लिपिकार ने अपने आत्मज के पठनार्थ लिखा है। यह कथन अन्तिम उल्लेख से ज्ञात होता है। पाठकों के अवलोकनार्थ, प्रति के अन्तिम पत्र का चित्र भी अन्यत्र दिया जाता है जिससे प्रतिकी लिपि आदि का साक्षात् परिचय मिल सकेगा। प्रति का पाठ प्रायः शुद्ध है। पूरे काव्य में कोई ४-५ ही स्थल ऐसे दृष्टिगोचर होते हैं जो अशुद्ध कहे जा सकते हैं। इससे मालूम होता है कि लिपिकार श्रीराम स्वयं अच्छा संस्कृत का विद्वान् होगा।

महमूद बेगड़ा गुजरात के सुलतानों में प्रसिद्ध और लोकप्रिय सुलतान हुआ है। सभी हिन्दू अथवा मुसलमान इतिहास लेखकों ने समान रूप से इसकी प्रशंसा लिखी है। इन्हीं के आधार पर अंग्रेज इतिहासकारों ने भी इसके इतिहास पर पूर्ण रूप से प्रकाश डाला है। मूलतः यह सुलतान राजपूत वंश का था और इसके पूर्वजों ने किस प्रकार सत्ता हाथ में लेकर गुजरात का स्वतंत्र राज्य स्थापित किया, इसका विवरण 'मीराते सिकन्दरी' 'मीराते अहमदी,' 'तवारीख मोहम्मदशाही,' कॉमिसरियट् की 'हिस्ट्री ऑफ गुजरात' व किन्लाक् फार्ब्स् कृत 'रासमाला' आदि पुस्तकों के आधार पर संक्षिप्त रूप से 'वंश परिचय' शीर्षक लेख में अन्यत्र दिया गया है। इस लेख में आवश्यक पाद-टिप्पणियों के साथ राजविनोद महाकाव्य के वे श्लोक भी उद्धृत किए गए हैं जिनसे मुख्य-मुख्य ऐतिहासिक घटनाओं पर प्रकाश पड़ता हैं। इससे यह भी स्पष्ट हो जावेगा कि राजविनोद महाकाव्य केवल साहित्यिक विनोद न होकर अपना ऐतिहासिक महत्त्व भी रखता है।

इस महाकाव्य के कर्त्ता कवि उदयराज के विषय में अभी और कोई विशेष परिचय प्राप्त नहीं है। कृति को देखते हुए यही प्रतीत होता है कि वह महमूद का समकालीन

कवि था । सम्भव है, उसके दरबार में भी उसे स्थान प्राप्त हो । प्रस्तुत काव्य के द्वारा कितनी ही ऐतिहासिक घटनाओं व महमूद के चरित्र पर तो प्रकाश पड़ता ही है, साथ ही अपनी कृति के लिए समयानुसार विषय चुनकर संस्कृत काव्य परम्परा की श्रृंखला में एक कड़ी जोड़ने का श्रेय भी कवि को अवश्य ही प्राप्त है ।

इस कृतिके इस प्रकार संपादन और प्रकाशन में राजस्थान पुरातत्त्वमन्दिर के सम्मान्य संचालक आचार्य श्रीजिनविजयजी की ही प्ररेणा और मार्ग-दर्शन मुख्यतः कारणभूत हैं, अतः इनके प्रति आन्तरिक कृतज्ञभाव प्रकट करना अपना परम कर्त्तव्य मानता हूँ ।

यदि मध्यकालीन इतिहास के विशेषज्ञ इस ऐतिहासिक काव्य से अपनी गवेषणा में कोई सहायता प्राप्त करके इतिहास के तथ्यों पर अधिक प्रकाश डाल सकेंगे तो इसके प्रकाशन का श्रम सफल समझा जा सकेगा ।

गोपालनारायण

महमूदबेगड़ा का वंश-परिचय

गुजरात के राजपूत सुलतानों का मूलपुरुष जिसने इस्लाम धर्म अंगीकार किया था उसका नाम सहारन था। बाद में उसकी उपाधि व उपनाम वज़ीर-उल्-मुल्क हुआ। वह टाँक (तक्षक) जातीय सूर्यवंशी क्षत्रिय* था इसीलिए गुजरात के इतिहास में इसके वंशजों का 'राजपूत सुलतान' नाम से उल्लेख किया गया है।

भगवान् श्री रामचन्द्र जी से कितनी ही पीढ़ियों बाद मुहुस हुआ। उसी के कुल में क्रम से दुर्लभ, नाक्त, भूक्त, मंडन, भुलाहन, शीलाहन, त्रिलोक, कुँअर, दरसप, हरीमन, कुँअरपाल, हरीन्द्र, हरपाल, किन्द्रपाल, हरपाल और हरचन्द हुए। सहारन हरचन्द का पुत्र था और थानेश्वर के पास एक गाँव में रहता था। उसके छोटे भाई का नाम साधु था। वे दोनों भाई जमींदारी का काम करते थे।

एक बार दिल्ली के बादशाह मुहम्मद तुग़लक के काका का लड़का शाहज़ादा फ़ीरोज़शाह शिकार को निकला और अपने साथियों से बिछुड़ कर सहारन के गाँव के पास जा पहुँचा। उस समय सहारन, उसका छोटा भाई साधु और दूसरे राजपूत एक जगह बैठे हुए थे। एक राजपूत ने फीरोज के पैर में राजचिह्न पहचान लिया। सहारन और साधु उसे अपने घर ले गए और उसका आगत-स्वागत किया। साधु की बहन ने उसे शराब पिलाई और उसी की लहर में फीरोज ने अपना परिचय दे दिया। साधु की बहन और फीरोज की शादी हो गई। तदनन्तर, वे दोनों भाई फीरोजशाह के साथ दिल्ली चले गये और इसलाम धर्म को ग्रहण कर लिया। बादशाह ने सहारन को वज़ीर-उल्-मुल्क का खिताब दिया। वजीर-उल्-मुल्क के जफ़रखाँ और शमशेर खाँ नामक दो लड़के हुए। जफ़र खाँ ही आगे चल कर मुजफ्फर खान के नाम से इस वंश का गुजरात का प्रथम शासक हुआ।

बादशाह के कहने से सहारन और साधु ने कुतुब उल् आफ़ताब-हजरत मुखदुम जहानिआँ से इसलाम धर्म की दीक्षा ली थी। सहारन का पुत्र जफ़र खाँ भी इन्हीं महात्मा का शिष्य था। एक दिन हजरत के मठ पर कुछ फकीर इकट्ठे हुए। उस समय महात्मा मुखदुम के पास खाने पीने का कुछ भी सामान नहीं था। जफ़र खाँ को यह बात मालूम थी। वह तुरन्त ही अपने घर से व बाजार से मिठाइयाँ आदि ले आया और सभी फकीरों को भोजन करा दिया। फ़क़ीरों ने तृप्त होकर जोर से 'अल्लाहो अकबर' का नारा लगाया। जब मुखदुम जहानिआँ को यह बात मालूम हुई तो उन्होंने जफ़र खाँ को बुलाकर प्रसन्नता पूर्वक कहा 'जो तुमने फ़क़ीरों को भोजन कराकर तृप्त किया है उसके बदले में मैं तुम्हें सम्पूर्ण गुजरात की हुकूमत प्रदान करता हूँ।' इस प्रकार जफ़रखाँ को फकीर का वरदान प्राप्त हुआ।

---

*वंशस्सहस्रांशुभवो जगत्यां जागर्त्यसौ राजभिरर्चनीयः ।
कर्णोपमो यत्र किलावतीर्णः श्रीमान् साहि मुदप्फरेन्द्रः ।।१।। राजविनोद-सर्ग २

हिजरी सन् ७९३ (१३९१ ई०) में यह खबर आई कि गुजरात के सूबेदार मुकर्रर खाँ ने जो रास्ती खाँ के नाम से प्रसिद्ध था, बलवा कर दिया। उसी वर्ष के रबीउल-अव्वल महीने की दूसरी तारीख को सुलतान मोहम्मद ने जफ़र खाँ को एक लाल तम्बू बख्शीश किया और निज़ाम मुकर्रर खाँ को दण्ड देने के लिए गुजरात की तरफ़ भेजा। उसी महीने की चौथी तारीख को सुलतान मोहम्मद जफ़र खाँ को विदा करने के लिए होज़खास पर गया और उसके पुत्र तातार खाँ को अपने पास रखकर पुत्रवत् पालन करने का वचन दिया।

हिजरी सन् ७९४ (१३९२ ई०) में सनंहुमन नामक ग्राम के पास जफ़र खाँ और मुकर्रर की मुठभेड़ हुई और इस लड़ाई में जफरखाँ विजयी हुआ। निज़ाम युद्ध में मारा गया और जफ़र ने पाटण में प्रवेश किया।

सन् ७९५ हिज़री में खान खम्भात[1] की तरफ़ गया और मुसलमानी रीतिके अनुसार गुजरात को अपने आधीन कर लिया।

हिंजरी सन् ८०६ (ई० स० १४०३) में मुजफ्फरशाह ने तातार खाँ को गद्दी सौंप दी और उसको नासिरउद्दीन मोहम्मद शाह की पदवी धारण कराई। वह स्वयं आशावल कसबेमें आकर रहने लगा और सब झंझट छोड़ दिया।

सुलतान मोहम्मदशाह इसी वर्ष के जमादिउल आखिर महीने में आशावल क़सबे में तख्त पर बैठा। एक सप्ताह बाद ही उसने नांदोल[2] के हिंदुओं पर चढ़ाई की और उनको हराया। फिर, उसने अपने लश्कर को साथ लेकर दिल्ली की ओर कूच किया। यह खबर सुनकर इक़बाल खाँ के मन में बहुत संताप उत्पन्न हुआ[3]। परन्तु शत्रवान

(१) समुद्गिरन् कच्छमहीपु येन डिण्डीरपाण्डूनि यशांसि खड्गः ।
स्फूर्जद्द्विषच्छोणितपङ्कलिप्तः प्रक्षालितः पश्चिमवारिराशौ ।।३।।
रा० वि० सर्ग २

(२) यस्य प्रसिद्धैर्द्विरदैर्विभिन्नप्राकारसौधस्फुरदट्टमालाः ।
अद्याप्यहो नन्दपदाधिनाथा भल्लूकवत् पल्लिवने भ्रमन्ति ।।६।।
रा० वि० सर्ग २ ।

(३) तवारीख मोहम्मदशाही में लिखा है कि फीरोज़शाह के पुत्र सुल्तान मोहम्मद की मृत्यु के बाद दिल्ली में एक बड़ा विद्रोह हुआ। प्रत्येक विद्रोही सरदार दिल्ली का तख्त प्राप्त करना चाहता था।...... इसी बीच में दिल्ली का राज्य कार्यभार एक वकील (प्रतिनिधि) के रूप में इकबाल खाँ के हाथ में आया। उस समय तातार खाँ पानीपत में था उसको जीतने के लिए इकबाल खाँ पानीपत को रवाना हुआ। तातार खाँ अपना सब सामान किले में रखकर लड़ाई के लिए तैयार हुआ और दिल्ली में घेरा डाला। तीसरे दिन इक़बाल खाँ ने पानीपत का किला जीतकर तातार खाँ के सामान पर अधिकार कर लिया। तातार खाँ ने गुजरात से लश्कर लाकर दिल्ली पर चढ़ाई करने का इरादा किया इसलिए वह अपने बाप से आकर मिला। इकबाल खाँ का वैर और दिल्ली का तख्त उसके मन से दूर न हुए। इकबाल खाँ भी उससे सशङ्क रहता था। निम्नांकित पद्य में सम्भवतः मल्लखान से इकबालखां का ही तात्पर्य है:—

के महीनेमें तातार खाँ की तबीयत एकदम बिगड़ गई और अच्छे अच्छे वैद्यों के दवा करने पर भी कोई फायदा नहीं हुआ। अन्त में, तातार खाँ की मृत्यु हो गई और उसका शव पाटण में लाकर दफ़नाया गया।

गुजरात की हकीकत जानने वाले लोगों का कहना है कि कुछ दिखावटी मित्रों के कहने से तातार खाँ ने अपने पिता जफ़र खाँ को कैद कर दिया था और स्वयं मोहम्मद-शाहका नाम धारण करके गद्दी पर बैठ गया।................कुछ दिनों बाद उसके पास रहनेवाले जफ़रखाँ के हितचिन्तकों ने उसे जहर दे दिया। इसीलिए लोग उसको 'खुवाई शहीद' (The Martyred Lord) कहते हैं। इससे भी प्रतीत होता है कि उसकी मृत्यु स्वभाविक रूप से नहीं हुई थी।

सुल्तान मोहम्मद की मृत्यु के बाद जफ़र खाँ फिर गद्दी पर बैठा। राज्य के नौकर चाकर सब उसके आधीन हो गए और उसने भी सबको आश्वासन दिया।

प्राचीन इतिहास लेखकों ने लिखा है कि सुलतान मोहम्मद की मृत्यु के बाद राज्य के बड़े बड़े अमीरों और अधिकारियों ने इकट्ठे होकर जफ़र खाँ से प्रार्थना की कि बादशाह के वंश में दिल्ली के शासन को सम्हालने वाला अब कोई नहीं रह गया है और वहाँ पर गड़बड़ी फैल रही है। गुजरात के शासन जैसे बड़े कार्य को सम्हालनेवाला आपके सिवाय अन्य पुरुष दिखाई नहीं देता है। अतः समस्त प्रजा का यह मत है कि आप गुजरात का राजच्छत्र धारण करें। इससे सबको आनन्द होगा। ऐसी इच्छा रखने-वालों की प्रार्थना पर (?) वीरपुर ग्राम में हि० स० ८१० (१४०७ ई०) में सुलतान मोहम्मद की मृत्यु के तीन वर्ष और सात महीने बाद जफ़र खाँ ने राज्यछत्र धारण करके मुजफ्फरशाह नाम धारण किया।[1]

इस प्रकार सुलतान का पद धारण करने के पश्चात् मुजफ़्फ़रशाह ने मालवा में धार के हाकिम अलपखान (दिलावरखाँ के पुत्र) को आधीन करने के लिए चढ़ाई की और उसको कैद करके उसके देश का शासन नुसरत खाँ को सौंप दिया।

इसी बीच में खबर मिली कि जवानपुर के सुलतान इब्राहीम ने दिल्ली पर अधिकार करने की नीयत से कन्नोज के आगे लड़ाई का निशान रोप दिया है। उस समय दिल्ली के तख्त पर सुलतान मोहम्मदका पुत्र महमूद था। उसकी सहायता करने के लिए मुजफ्फर-शाह ने दिल्ली की तरफ़ कूच किया। यह खबर सुनकर सुलतान इब्राहिम वापस जवानपुर चला गया। सुलतान मुजफ्फर ने उसका पीछा किया और फिर अपनी

उदित्वरो यस्य बभौ जगत्यां सहस्रभानुप्रतिमः प्रतापः।
यो मल्लखानाख्यमुलूकमिन्द्रप्रस्थस्थमुद्वेजितवान् द्विषन्तम् ॥८॥

रा० वि० सर्ग २।

(१) दिल्लीपुराद् गूर्ज्जरदेशमेत्य दधार यो मूर्द्धिन सितातपत्रम ॥२॥

रा० वि० सर्ग २।

राजधानी को लौट आया। उस समय वह धार के पूर्व शासक अलपखाँ को अपने साथ लेता आया था।

अलपखाँ एक वर्ष तक कैद में रहा। इसी बीच में उसी के एक उमराव मूसा खाँ ने, जो माँडू का हाकिम था, मालवे के थोड़े से भाग पर अधिकार कर लिया। इस पर अलपखाँ ने अपने हाथ से एक अर्जी लिखकर मुजफ्फरशाह के पास भेजी कि मेरे एक अधीनस्थ उमराव ने मालवे के कुछ हिस्से पर कब्जा कर लिया है; यदि आप मुझे इन बेड़ियों से मुक्त करके उपकार की कैद में डाल दें तो थोड़े ही समय में मालवे पर पुनः अधिकार प्राप्त करके अपनी शेष आयु आपके गुलाम की तरह बिताऊँगा। सुलतान ने उसपर कृपा करके मुक्त[1] ही नहीं कर दिया वरन् अपने पुत्र अहमदखाँ को लश्कर देकर सहायता के लिए उसके साथ भी भेजा। मूसाखाँ में सामना करने की शक्ति कहाँ थी? वह भाग गया और शाहज़ादा अलपखाँ को गद्दी पर बिठा कर वापस आया।

मुजफ्फरशाह ने हिजरी सन् ८१२ (ई० १४०९) में कुम्भकोट के हिन्दुओं के विरुद्ध खुदावन्द खाँ की सरदारी में फौज भेजी जो विजयी होकर वापस आई।

मुजफ्फरशाह की मृत्यु के विषय में तवारीख बहादुरशाही में इतना ही लिखा है कि सुलतान की मृत्यु हि० स० ८१३ (ई० स० १४१०) में हुई। कुछ जानकार लोग इस वृत्तान्त के विषय में इस प्रकार कहते हैं कि आशावल कसबे के कोलियों ने सुलतान की सत्ता को स्वीकार नहीं किया और घाट बाट पर लूट पाट करने लगे। मुजफ्फरशाह न एक हजार सिपाही साथ देकर अहमदखाँ को उन्हें दबाने के लिए भेजा। अहमदखाँ ने शहर से बाहर निकल कर विद्वानों को बुलाया और उनसे प्रश्न किया कि 'एक शख्श किसी दूसरे शख्श के बाप को बिना कुसूर मार डाले तो उससे बाप के मारने का बदला लेना धर्मानुकूल है या नहीं?" सभी विद्वानों ने कहा "बदला लेना ठीक है।" विद्वानों की यह सम्मति एक कागज पर लिखाकर अहमदखाँ ने अपने पास रक्खी। दूसरे दिन वह अपने सवारों सहित शहर में दाखिल हुआ और सुलतान को क़ैद करके मार डाला। सुलतान ने मरते समय अहमदखाँ को कुछ शिक्षाएं दीं, जो इस प्रकार हैं :—

"पुत्र! तुमने इतनी जल्दी क्यों की? कुरान में लिखा है कि मृत्यु तो अन्त में आवेगी ही—एक घड़ी पहले या पीछे। मेरी इन शिक्षाओं पर ध्यान रखना। इनसे तुझे लाभ होगा।

जिन लोगों ने तुझे यह काम करने के लिए उकसाया है उनसे दोस्ती मत रखना वरन् उनको मार डालना क्योंकि दग़ाबाज़ का खून हलाल (उचित) है।

शराब पीने का शौक बिलकुल मत करना क्योंकि शराब के प्याले में दुःख के समुद्र का तूफान रहता है।

---

(१) मुमोच बन्दीकृतमल्पखानमनल्पवीर्यं बलवत्तरो यः।
वंश्यास्ततो मालवराजबन्दिमोक्षपदाख्यं विरुदं वहन्ति ॥४॥ रा० वि० सर्ग २।

शेख़ मलिक और शेर मलिक को मार डालना क्योंकि ये राज्य में बखेड़ा करने वाले हैं ।

तू हमेशा कृपावन्त रहना । यदि तू अपने ही सुख में डूबा रहेगा तो देश में सुख चैन नहीं रह सकेगा ।

गरीब दरवेशों (सन्तों) की फिकर रखना क्योंकि प्रजा के बल पर ही राजा ताज धारण किए रहता है ।

प्रजा मूल है और सुलतान वृक्ष है । हे पुत्र ! मूल ही से वृक्ष मजबूत होता है । इसलिए जहाँ तक हो सके वहाँ तक प्रजा से बिगाड़ नहीं करना चाहिए । हे पुत्र ! यदि ऐसा करोगे तो तुम अपनी ही जड़ काट डालोगे ।"

इसके थोड़ी ही देर बाद सुलतान इस क्षणभंगुर संसार को छोड़कर चल बसा[1] । यह घटना सफ़र महीने के अन्तिम दिनों में हुई । उसको पाटण शहर के किले के अन्दर कब्र में दफ़नाया गया ।

मुजफ्फरशाह के बाद उसका पौत्र सुलतान मोहम्मद का पुत्र अहमदशाह-- सुलतान अहमद नासिरुद्दीन अबुलफ़त अहमदशाह का पद धारण करके हिजरी सन् ८१३, तारीख १४ रमजान के महीने में गद्दी पर बैठा । उस समय उसकी आयु २१ वर्ष की थी ।

अहमदशाह के गद्दी पर बैठते ही उसके चचेरे भाई फ़ीरोज खाँ ने अपना हक प्रकट किया और भडौंच में अपनेआपको सुलतान घोषित कर दिया । परन्तु अहमदशाहने कुछ समय के लिए उसके विद्रोह को दबा दिया । इसके बाद सुलतान ने आशावल[2] ग्राम की जलवायु को अपने अनुकूल मानते हुए वहीं पर १४१२ ई० में एक नगर बसाया जो उसीके नाम पर अहमदाबाद कहलाया[3] । आशावल ग्राम भी इस बड़े नगर का ही एक हिस्सा बन गया । अहमदाबाद उसी समय से गुजरात के बादशाहों की राजधानी रहता आया है ।

---

१ मुजफ्फरशाह की मृत्यु २७ जनवरी सन् १४११ ई० को हुई । रासमाला पृ० ४३४

२ आशावल ग्राम आशा नामक भील के नाम पर बसा हुआ था । यहीं पर कर्ण सोलंकी ने - कर्णा[illegible]ी पुरी बसाई थी । अलबेरूनी ने भी ४ शताब्दी पूर्व येशावल नगर का ज़िकर किय. . .

३ अहमदाबाद का कोट हि० स० ८१६ (१४१३ ई०) में बन कर तैयार हुआ था । कहते हैं कि इस नगर की नींव रखने में अहमद नाम के चार व्यक्तियों का हाथ था । एक, कुतुबुल मुशायख शेख अहमद खतु, दूसरा सुलतान अहमद, तीसरा शेख अहमद और चौथा मुल्लां अहमद । पिछले दोनों व्यक्ति बहुत विद्वान् थे ।

राज विनोद में अहमदशाह द्वारा नगर बसाए जाने का कोई वर्णन नहीं है ।

उसी वर्ष के अन्त में फीरोज़ खाँ ने फिर राजगद्दी का दावा किया और मोड़ासा के स्थान पर अपना झण्डा खड़ा किया । ईडर का राव रणमल भी उसके साथ हुआ परन्तु शाह ने रूपनगर स्थान पर उनको परास्त कर दिया और राव व फीरोज़ खाँ प्राण बचाकर पहाड़ियों में भाग गए। थोड़े दिन बाद राव में और फीरोज खाँ में भी अनबन हो गई और रणमल ने उसके हाथी और घोड़े छीन कर शाह को भेंट कर दिए ।

मालवा के सुल्तान हुशंगशाह ने गुजरात के शत्रुओं को आश्रय दिया तथा इस देश पर १४११ ई० व १४१८ ई० में हमले किये परन्तु शाह ने उसको हर बार परास्त कर दिया। अहमदशाह ने भी १४१९ ई० में मालवा पर हमला किया और हुशंगशाह को भागकर माँडू के किले में शरण लेनी पड़ी[1] । १४२२ ई० में अहमदशाह ने फिर मालवा पर आक्रमण किया परन्तु वह माँडू के किले पर अधिकार करने में सफल न हुआ ।

हि० स० ८१७ (१४१५ ई०) में अहमदशाह को गिरनार का किला देखने की इच्छा हुई इसलिए उसने विद्रोहियोंको उसी दिशा में खदेड़ा। उस समय तक सौराष्ट्र के किसी भी राजा ने मुसलमानों के आगे सिर नहीं झुकाया था इसलिए सोरठ के राजा पर शेर मलिक को आश्रय देने का बहाना बना कर शाह ने उस पर आक्रमण कर दिया। हिन्दू राजा ने सामना तो किया परन्तु मुसलमानों की युद्धप्रणाली से अनभिज्ञ होने के कारण वह जल्दी ही हार गया और भाग खड़ा हुआ। शाह ने गिरनार के किले तक उसका पीछा किया । इसके बाद कुछ वार्षिक कर देना स्वीकार करलेने पर वह अहमदाबाद लौट गया। रास्ते में उसने सिद्धपुर के देवालयों को नष्ट करके बहुत सा धन व जवाहरात प्राप्त किए ।

गुजरात के बलशाली राजाओं के अतिरिक्त छोटे छोटे सरदारों को भी वश करने व उनसे कर वसूल करने में अहमदशाह को खूब प्रयास करना पड़ा था । ये लोग अपने अपने किलों में छुप जाते थे और जंगलों में भाग जाते थे इसलिए इनसे कर वसूल करने में बहुत कठिनाई पड़ती थी। अन्त में शाह ने इन पर वार्षिक कर नियुक्त कर दिए और इनकी जमीनें व किले इनको वापस कर दिये।

१४२६ ई० में शाह ने फिर ईडर पर विजय प्राप्त करने की इच्छा की। वह जानता था कि ईडर के राज्य पर अधिकार रखना उसके काबू से बाहर की बात थी। वह यहाँ का क़िला कभी भी न ले सका था; इसलिए उसने यहाँ के रावों पर आतंक जमाने के लिए हाथमती नदी के किनारे एक विशाल किला बनवाना शुरू किया। यह क़िला ईडरगढ़ पर झुके हुए पर्वत शिखरों पर से स्पष्ट दिखाई पड़ता था। बादशाह ने इसका नाम अहमदनगर रक्खा। तत्कालीन ईडर का राव पूंजा तो

---

१ "हुशङ्गशाहेरधिवासदुर्गमाक्रामता मण्डपमाग्रहेण।
येनोच्चकैराचकृपे करेण पदे पदे मालवमण्डलश्रीः ॥११॥" रा० वि० सर्ग २.

एक खड्डे में गिरकर मर गया और उसके पुत्र नारायणदास ने चाँदी के तीन लाख टंक वार्षिक कर देना स्वीकार करके संधि करली [1]। परन्तु दूसरे ही वर्ष १४२८ ई० में वह संधि टूट गई और अहमदशाह ने १४ नवम्बर को वह क़िला जीत लिया। वहीं पर उसने एक विशाल मसजिद भी बनवाई।

इसके बाद (८३५ हि०, १४३१ ई०) दक्षिण के बहमनी सुलतान, सालसेट, माहिम और बम्बई द्वीप पर सुलतान ने विजय प्राप्त की। दिव, घोघा और खम्भात के द्वीप भी गुजरात के इस सुलतान के अधिकार में थे। कितनी ही बार गुजरात की विजयिनी सेना इन द्वीपों से सोने चाँदी और ज़रकशी के कपड़े व जवाहरात लेकर घर लौटी थी। [2]

अहमदशाह की मृत्यु ४ जुलाई सन् १४४३ ई० को अहमदाबाद नगर में हुई और उसको जामा मसजिद के सामने दफ़नाया गया।

गुजरात के सुलतानों में अहमदशाह को बहुत प्रजाप्रिय और न्यायी सुलतान के रूप में याद किया जाता है। एक कवि ने उसके लिए लिखा है कि "हे राजा! तेरे न्यायपूर्ण समय में किसी मनुष्य को फरियाद करने की आवश्यकता नहीं पड़ी [3]।" यह कविता प्रेमी और गुणग्राहक था।

अहमदशाह के बाद उसका पुत्र मुहम्मदशाह गद्दी पर बैठा। यह बहुत विलासी [4] था और राजकाज में विशेष रुचि नहीं रखता था। इसमें बादशाह के पदयोग्य बुद्धि भी नहीं थी; परन्तु, वह बहुत उदार [5] था इसीलिए उसको लोग 'ज़रबख्श' कहते थे [6]।

गद्दी पर बैठते ही उसने ईडर पर चढ़ाई की। राव कुछ दिनों तक तो इधर उधर पहाड़ियों में छिपता रहा, बाद में उसने अपने अपराधों के लिए क्षमा माँग ली। १४४९ ई० में सुलतान ने चम्पानेर [7] के रावल गंगादास पर चढ़ाई की और उसको हराकर किले में भाग जाने के लिए बाध्य किया। परन्तु, गंगादासने बाद में मालवा के खिलजी सुलतान को अपनी सहायता के लिए राजी कर लिया

---

(१) फरिश्ता।

(२) इन सब घटनाओं का उल्लेख राजविनोद के इस श्लोक में किया गया है -
विभज्य दुर्गाणि निहत्य वीरान् हठान् महाराष्ट्रपतिं विजित्य।
जग्राह रत्नाकरसारजातमनर्गलैर्यः स्वबलैर्बलीयान् ॥१२॥ रा० वि० सर्ग २.

(३) कुर्वन्तु गर्वं बहवोऽप्यखर्वमुर्वीश्वराः श्रीगुणगौरवेण।
अहम्मदेन्द्रस्य जतानुरागसौभाग्यलेशं न परे लभन्ते ॥१३॥ रा० वि० सर्ग २.

(४) रूपश्रियैव विजितः समभून्‌ मनोभूः श्रीमन्महम्मदनराधिपतेरनङ्गः।
अस्य स्त्रियः खलु जगज्जयिनोऽपि तस्य वीक्ष्यैव तत्क्षणममुं विवशीबभूवुः॥१६॥
रा० वि० सर्ग २.

(५) रा० वि० १७,१९ सर्गः २; (६) मीराते सिकन्दरी।

(७) रा० वि० १८, स० २

तब इस नवीन शत्रु के सामने मुहम्मदशाह न टिक सका और बुरी तरह हारकर लौट गया[1]। थोड़े ही समय बाद हि० स० ८५५ (ई० १४५१-५२) के मोहर्रम मास की २०वीं तारीख को उसकी मृत्यु हो गई।[2]

मुहम्मदशाह के बाद हि० स० ८५५ (१४५१ ई०) के मोहर्रम मास की ११ वीं तारीख को उसका बड़ा शाहजादा कुतुबउद्दीन तख्त पर बैठा। उसी समय उसे मालूम हुआ कि राजधानी से कुछ ही मील की दूरी पर मालवा के सुलतान की सेना आ पहुँची है इसलिए आगे बढ़कर उसका सामना किया। मालवा के महमूद खिलजी को वापस लौटना पड़ा और कुतुब की जीत हुई। इसके बाद इन दोनों सुलतानों ने मिलकर हिन्दुओं के विरुद्ध युद्ध-योजना करते रहने की प्रतिज्ञा की और मेवाड़ के राणा कुम्भा के राज्य को आपस में बाँट लेने का मनसूबा किया।

मुजफ्फरशाह के भाई का वंशज शम्स खां उस समय नागौर का स्वामी था इसलिए उसने राणा के विरुद्ध सहायता करने के लिए कुतुबशाह से प्रार्थना की। शाह ने अपनी फौजें उसकी सहायता के लिए भेजीं परन्तु राणा ने उन्हें बुरी तरह हरा दिया। इस पर कुतुबशाह फिर नागौर की तरफ स्वयं रवाना हुआ और मेवाड़ के अधीनस्थ सिरोही के राजपूतों को जीत लिया। फिर वह पहाड़ी मार्ग से कुम्भलमेर के किले की ओर बढ़ा परन्तु बीच ही में राणा ने उस पर आक्रमण कर दिया। इसके बाद राणा में और कुतुबशाह में सन्धि हो गई।

अब, मालवा के सुलतान ने कुतुबशाह को फिर भड़काया और चम्पानेर के स्थान पर राणा के राज्य को आपस में बाँट लेने की संधि पर हस्ताक्षर किए। दूसरे वर्ष, कुतुबशाह ने फिर आबूगढ़ को जीत लिया। वहाँ कुछ फौज छोड़कर वह सिरोही पहुँचा और एकबार फिर राणा से संधि हो गई। अगले वर्ष १४५८ ई० में राणा ने फिर नागौर पर चढ़ाई की। बहुत देर करके कुतुबशाह उसका सामना करने के लिए रवाना हुआ और जय प्राप्त करता हुआ कुम्भलमेर की तरफ़ बढ़ा परन्तु उसको बीच ही में रुकना पड़ा। इसके थोड़े ही दिनों बाद वह अहमदाबाद लौट गया और मर गया।

कुतुबउद्दीन के बाद हिजरी सन् ८६३ (१४५८-५९) के रजब महीने की २३ वीं तारीख को अहमदशाह का पुत्र दाऊद गद्दी पर बैठा। परन्तु वह बिलकुल अयोग्य सिद्ध हुआ[3] इसलिए गुजरात के अमीरों व उच्च राज्याधिकारियों ने निर्णय किया

---

(१) रासमाला (२) अथवा उसको जहर दे दिया गया। देखो रासमाला; मीराते सिकन्दरी, तवारीख अहमदशाही।

३ राजविनोद में कुतुबुद्दीन और दाऊद का कोई वर्णन नहीं है। दाऊद का नाम न होने का तो कारण स्पष्ट है क्योंकि उसने केवल ७ ही दिन राज्य किया परन्तु कुतुबुद्दीन ने तो ८ वर्ष के लगभग राज्य किया था और मेवाड़ के राणा व मालावा के सुलतान से युद्ध करके उसने कीर्तिलाभ भी किया था। अन्य हिन्दू एवं मुसलमान इतिहासकारों ने उसका उल्लेख किया है। इसका कारण यह प्रतीत होता है कि कुतुबुद्दीन फतहखाँ

कि मुहम्मदशाह के पुत्र फतहखाँ को गद्दी पर बिठाना चाहिए क्योंकि उसमें बादशाह होने के गुण भी पाए जाते हैं और आकृति में भी वह भव्य है।

फतहखाँ महमूदशाह के नाम से हि० स० ८६३ (१५१० ई०) के शअबान मास की पहली तारीख, रविवार के दिन अहमदाबाद में तख्त पर बैठा। उस समय उसकी अवस्था तेरह वर्ष की थी।[१] यही महमूदशाह आगे चल कर महमूद बेगड़ा के नाम से प्रसिद्ध हुआ और यही राजविनोद काव्य का चरित्र-नायक है।

तख्त पर बैठने के थोड़े ही दिन बाद कुछ अविचारशील सरदारों ने वज़ीर ईमादउल् मुल्क के साथ झगड़ा करके उसको मार देने का षड्यन्त्र किया। परन्तु, सुलतान ने धीरज और चतुराई से ऐसी व्यवस्था की कि सब विद्रोह शांत हो गया और इसके बाद में वज़ीर के विरुद्ध सर उठाने की किसी भी सरदार की हिम्मत न पड़ी।]

सन् १४६७ ई० में महमूद ने सोरठ पर चढ़ाई की परन्तु इस बार उसको विशेष सफलता नहीं मिली इसलिए उसने बहुत से जवाहरात और नकदी की भेंट लेकर राव से शत्रुता बन्द कर देने की आज्ञा दे दी[२]।

(महमूद बेगाडा का पहला नाम) का सौतेला भाई था और शुरू से ही उससे द्वेष रखता था। फतह खाँ की माता सिन्ध के बादशाह जाम जानु- हन की पुत्री थी। उसका नाम बीवी मुधली था। उसकी दूसरी बहन बीवी मिरघी थी। पहले उनके पिता ने बीवी-मिरधी की शादी गुजरात के सुलतान मुहम्मदशाह के साथ और मुधली की हज़रत कुतुबुल आफताब के पुत्र हज़रत शाह आलम के साथ करने का निश्चय किया था। परन्तु बीवी मधुली अधिक सुन्दरी थी इसलिए मुहम्मदशाह ने अपनी सत्ता और द्रव्य के दबाव से उसकी शादी अपने साथ करवाली। बीवी मिरधी का विवाह हज़रत शाह आलम के साथ हो गया। मुहम्मदशाह की मृत्यु के बाद कुतुबुद्दीन के व्यवहार से असन्तुष्ट होकर मुधली अपने पुत्र फतह खाँ को लेकर शाहआलम के आश्रय में आकर रही। कुछ समय बाद बीवी मिरधी की मृत्यु हो गई और मुधली ने शाहआलम के साथ पुनर्विवाह कर लिया। इस प्रकार फतहखां का पालनपोषण व शिक्षा दीक्षा हज़रत शाह आलम ही ने किया। बीवी मुधली ने अपनी सेवाओं से प्रसन्न करके उनसे फतहखाँ के लिए गुजरात के तख्त का वरदान भी प्राप्त कर लिया था। कुतुबखां ने कई बार फतह खाँ को मार देने के प्रयत्न किए परन्तु हज़रत ने उसकी हर बार रक्षा की। राजविनोद महमूद की प्रशस्ति में उसके आश्रित कवि द्वारा रचा हुआ काव्य है अतः इसमें कुतुब का उल्लेख जानबूझ कर नहीं किया गया है। कविने तो यहां तक किया है कि कुतुबुद्दीन ने राणा कुम्भा पर जो विजय प्राप्त की थी उसका श्रेय भी अपने वर्णनीय आश्रयदाता महमूद को ही दे दिया है। वास्तव में राणा कुम्भा और महमूद बेगड़ा में किसी युद्ध का होना इतिहास में नहीं पाया जाता है। (सं.)

(१) मीराते सिकंदरी

(२) रासमाला।

परन्तु, इससे उसको संतोष नहीं हुआ और वह फिर गिरनार पर हमला करने का बहाना ढूँढने लगा । दूसरे ही वर्ष उसे बहाना मिल भी गया ।

राव माण्डलिक राजचिन्हों को धारण किए हुए किसी मन्दिर में पूजा करने के लिए गया । जब महमूद को यह समाचार मिला तो उसे वह सहन नहीं कर सका और तुरन्त चालीस हजार फौज लेकर राव को शिक्षा देने के लिए रवाना हो गया । राव में इतनी सामर्थ्य नहीं थी कि वह मुसलमानों का सामना करता इसलिए उसने मुँहमाँगा कर दे दिया और राजचिह्न भी सुलतान को भेंट कर दिए । परन्तु, यह सब व्यर्थ हुआ और परम शूरवीर पृथ्वीराज चौहान का यह कथन कि 'एक वार उड़ाई हुई मक्खी की तरह शत्रु भी फिर फिर कर वापस आता है' उस पर ठीक-ठीक लागू हो गया । उसी वर्ष के अन्त में महमूद ने सोरठ पर फिर चढ़ाई कर दी । राव ने अपनी प्रजा को संकट से बचाने के लिए फिर मुँहमाँगा धन देना चाहा परन्तु महमूद ने उसे इसलाम धर्म स्वीकार करने के लिए बाध्य किया । राव ने कुछ उत्तर न देकर किले के दरवाज़े बन्द कर लिए और महमूद ने घेरा डाल दिया । अन्त में, राव ने देखा कि उसके दुःखों का अन्त नहीं है तो उसने किले की चाबियाँ सुलतान को सौंप दी और उसके कहने के अनुसार क़लमा पढ़ लिया । (१४७० ई०)[१]

इस विजय के अनन्तर महमूद ने विभिन्न प्रांतों से बहुत से सय्यदों और विद्वानों को सोरठ में बसने के लिए बुलाया और एक नगर भी बसाया । इस नगर का नाम मुश्तफाबाद पड़ा । कहते हैं, यह नगर बहुत जल्दी ही तैयार होकर राजधानी की समानता करने लगा था । वर्ष का कुछ भाग महमूद यहीं बिताता था ।

जब वह इस नए नगर के भवनों का निरीक्षण कर रहा था उसी समय यह समाचार मिला कि कच्छ के निवासियों ने गुजरात पर आक्रमण कर दिया है इसलिए वह उधर चढ़ चला और बहुत जल्दी ही उनको अपनी आधीनता स्वीकार करने के लिए बाध्य कर लिया । इसके अनतन्र महमूदशाह ने सिन्ध के जाटों और बलूचियों पर चढ़ाई की और सिन्धु नदी तक देश के अंतरंग में घुसता चला गया । ये घटनाएं ई० स० १४७२ में हुई ।[२]

सिन्ध की चढ़ाई के वाद महमूद ने जगत (द्वारका) और शङ्खोद्धार (वेट) द्वीप के सरदारों पर चढ़ाई की । इसका कारण यह वतलाया जाता है कि मौलाना मोहम्मद समरकन्दी ने सुलतान के पास आकर द्वारका व बेट द्वीपके ब्राह्मणों की शिकायत की और महमूद ने उधर चढ़ाई कर दी । उसने द्वारका की बहुत सी

---

(१) मीराते सिकन्दरी के लेखक का कहना है कि रावने सुलतान के कहने से इसलाम धर्म स्वीकार नहीं किया था वरन् एक फक़ीर का चमत्कार देखकर ऐसा किया था । उसे यह बोध देने वाले रसूलावाद के पीर शाहआलम थे ।

(२) कॉमिसरियट्---हिस्ट्री आफ़ गुजरात, भा० १ (१९३८), पृ० १३०

इमारतों व मूर्तियों को तुड़वा दिया । इसके बाद वहीं एक मसजिद बनवाने के विचार से चार महीनों तक फौज को रोके रहा । तदनन्तर, शङ्खोद्धार द्वीप पर चढ़ाई की । वहाँ के राजा भीम ने २२३ बार युद्ध किया परन्तु अन्त में महमूद का बेड़ा पार उतर गया और बहुत से राजपूत मारे गए । एक छोटीसी नाव में बैठकर भागता हुआ भीम पकड़ लिया गया और अहमदाबाद में लाकर मार दिया गया।[1]

सन् १४७६ ई० की बरसात में सुलतान अहमदाबाद की तरफ गया और शरद ऋतु में मुस्तफाबाद आकर रहने लगा । वहीं आस पास के जंगलों में वह शिकार के लिए निकलता था । कुछ दिनों बाद वह फिर अहमदाबाद आ गया । एक बार वह शिकार खेलता हुआ अहमदाबाद से ईशानकोण में बारह कोस की दूरी पर वात्रक नदी तक जा पहुँचा । वहाँ उसे ज्ञात हुआ कि लोग जभी तभी लूट पाट कर लेते हैं इसलिए उसके मन में विचार आया कि इस स्थान पर एक नगर बसाया जावे और उसका नाम महमूदाबाद रक्खा जावे । उसी समय नगर की नींव रख दी गई और बहुत जल्दी ही वह बन कर तैयार हो गया ।

इसके बाद ही हि० स० ८८५ (ई० स० १४८०) में कुछ मुसलमान सरदारों ने महमूद को पदभ्रष्ट करके उसके पुत्र अहमद (मुजफ्फर) को तख्त पर बिठाने का षड्-यन्त्र रचा । सुलतान ने उनका ध्यान बटाने के लिए चम्पानेर पर चढ़ाई करने के विषय में उनसे मंत्रणा की । परन्तु, वे उसकी बातों में न आए । अतः चम्पानेर की चढ़ाई कुछ समय के लिए स्थगित रही । बाद में १४८२ ई० में उसने फिर चम्पानेर पर आक्रमण करने की तैयारियाँ की । परन्तु, उसी समय उसका ध्यान सूरत के दक्षिण में बलसाड़ के जहाजियों की ओर गया जिनका प्रभाव इतना बढ़ गया था कि वे केवल व्यापार ही नहीं करते थे प्रत्युत उनकी ओर से उसके राज्य पर भी हमला होने की आशंका होने लगी थी । महमूद ने खम्भात में एक बेड़ा इकट्ठा किया जिसमें तीरंदाज व बन्दूकें तथा तोपें चलाने वाले सभी लोग थे । यह बेड़ा जहाजों में चढ़कर रवाना हुआ । शत्रुओं के पैर उखड़ गए और सुलतान के बेड़े ने उसका पीछा किया । कुछ देर युद्ध होने के बाद वे मल्लाह और उनके वाहन पकड़ लिए गए । इसी वर्ष के अन्त में उसने चम्पानेर पर चढ़ाई कर दी ।

हिजरी सन् ८८७ (१४८२ ई०) में समस्त गुजरात व चम्पानेर में वर्षा बहुत कम हुई थी । उसी समय सुलतान की फौज का विशेष अफ़सर मलिक असद अपने लश्कर के साथ चम्पानेर दुर्ग के पास जा पहुँचा । रावल ने भी क़िले से

---

(१) द्वारका और बेट द्वीपों पर महमूद ने हि० स० ८७८ (ई० स० १४७३) में विजय प्राप्त करके मलिक तोघान को वहाँ का सूबेदार नियुक्त किया और उसको 'फरहतउल् मुल्क' का अलक़ाब दिया ।

बेट का राजा भीम १४७५ में मौलाना समरकन्दी के कहने के अनुसार नगर में चारों तरफ़ घुमाकर टुकड़े टुकड़े करके मार दिया गया (मीराते सिकन्दरी).

बाहर आकर युद्ध शुरू किया । मलिक की हार हुई और सरकारी हाथी, कुछ घोड़े और सभी सिपाही मारे गये । यह खबर सुनकर सुलतान को बहुत क्रोध आया और उसने चम्पानेर पर पूर्ण विजय प्राप्त करने का निश्चय किया ।

जब चम्पानेर के रावल[1] ने सुना कि महमूद उसपर हमला करने आ रहा है तो पहले तो वह आवेश में आकर निकल पड़ा और सुलतान के मुल्क में आग लगाने लगा व मार काट करने लगा । परन्तु, फिर कुछ सोच विचार कर उसने सन्धि का प्रस्ताव कर दिया । महमूद किसी भी शर्त पर सन्धि करने को राजी न हुआ और अन्त में मुसलमानी सेना ता० १७ मार्च १४८३ ई० को काली के पर्वत की तलहटी में जा पहुँची । रावल ने एक बार फिर सन्धि के लिए प्रार्थना की परन्तु उस पर किसी ने ध्यान नहीं दिया । अन्त में उसने पूर्ण साहस के साथ सामना करने का निश्चय किया । मुसलमानी सेना नें घेरा डाल दिया और राजपूतों ने उन पर आक्रमण चालू कर दिए । कई बार मुसलमानों के छक्के छूट गए परन्तु अन्त में विवश होकर रावल को अपने पुराने सहायक मालवा के सुलतान गियासुद्दीन से सहायता माँगनी पड़ी और वह उसका साथ देने के लिए रवाना भी हो गया । परन्तु, इतने ही में महमूद ने उस पर चढ़ाई कर दी और वह समय अनुकूल न देखकर मालवा लौट गया । महमूद भी अपने घेरे पर चम्पानेर लौट आया ।

अपना घेरा चालू रखने का आशय जानते हुए सुलतान ने वहीं एक मसजिद बनवाई और सुदृढ़ घेरा डाल दिया । अन्त में मुसलमान लोग क़िले के इतने नजदीक पहुंच गए कि उन्हें उस गुप्त मार्ग का भी पता चल गया जिससे राजपूत लोग नहाने-धोने व पानी आदि लेने के लिए बाहर आया करते थे । इसके बाद उन्होंने क़िले की पश्चिमी दीवार तोड़ डाली और उस मार्ग पर अधिकार कर लिया । यह घटना सन् १४८४ ई० के १७ नवम्बर की है । अब क़िले पर गोलाबारी शुरू हुई और उधर राजपूतों ने जौहर की तैयारियाँ कीं । चिता तैयार हुई और उसमें रानियाँ, दासियाँ, धन दौलत आदि सभी कुछ स्वाहा हो गए[2] । इसके बाद पावागढ़ के रक्षक राजपूत केसरिया वस्त्र पहन कर बाहर आए और रणभूमि में मृत्यु प्राप्त की । चम्पानेर का रावल और उसका प्रधानमंत्री डूंगरशी जीवित पकड़ लिए गए । महमूद ने अपनी विजय के स्मारक-स्वरूप वहीं महमूदाबाद नामक नगर बसाया । रावल और डूंगरशी के घाव अच्छे होने पर उन्हें इसलाम धर्म

---

(१) रावल गंगादास का पुत्र जयसिंह; फरिश्ता ने इसका नाम बेनीराय लिखा है । हिन्दू दन्तकथाओं में यह 'पताई रावल' के नाम से प्रसिद्ध है । (देखो रा० ब० गो० ही० ओझा कृत मेवाड़ का इतिहास) ।

(२) राजविनोद में पावक गिरिका यह वर्णन महमूद के पिता महम्मद के समय में होना बताया गया है–

"यस्य प्रतापभरपावकसंगमेन दग्धस्य पावकगिरेः शिखरान्तरेषु ।
प्रैक्षन्त जर्ज्जरसुधाविधुराणि भस्मराशिप्रभाभि रिपवो निजमन्दिराणि ।।
रा० वि० सर्ग २. १८

ग्रहण कर लेने को कहा गया परन्तु उन्होंने अस्वीकार कर दिया। इस पर सुलतान ने उनको मरवा दिया।

भाट ने इस घटना का वर्णन इस प्रकार किया है :-

संवत् पंदर प्रमाण, एकतालो संवत्सर;
पोस मास तिथि त्रीज, वढ़ेहु वार रवि सुदन;
मरशिया षट्भूप, प्रथम वेरसी पडीजे;
जाडेचो सारंग, करण,, जेतपाल कहीजे।

सरवरियो चन्द्रभाण, पताह काज पिंडज दियो।
महमुदाबाद मेहराण, लघु कटक सर पावो लियो।

सन् १४९४ ई० में दक्षिण के बहमनी राज्य के विद्रोही बहादुर गिलानी नामक सरदार ने गुजरात के कुछ व्यापारिक जहाजों को लूट कर माहिम द्वीप पर अधिकार कर लिया। महमूद ने उसके विरुद्ध जल व स्थल सेनाएं भेजीं और बहमनी के सुलतान के पास भी एक ऐलची द्वारा पत्र भेजा। उसने तुरंत ग़िलानी पर चढ़ाई करदी और उसे पकड़ कर मार डाला। गुजरात के मनुष्यों व वाहनों को मुक्त करके वापस भेज दिया गया।

दूसरे वर्ष महमूद ने बागड और ईडर[1] पर चढ़ाई की और वहाँ के राजाओं से भारी भेंट वसूल करके महमूदाबाद (चम्पानेर) लौटा।

सन् १५०७ ई० में महमूद फिर हमारे सामने जल-सेनापति के रूप में आता है। कुछ यूरोप निवासियों ने समुद्र पर अधिकार जमा रक्खा था और गुजरात के किनारे बस जाने की इच्छा से कुछ बन्दरगाहों पर कब्ज़ा कर लिया था। तुर्की बादशाह बजाजैत द्वितीय का जहाजी कप्तान पन्द्रहसौ आदमियों का बेड़ा लेकर गुजरात के किनारे आ पहुँचा। उधर महमूद व उसके अन्य सेनापति भी आ पहुँचे। इस लड़ाई में मुसलमानों की विजय हुई और पुर्तगालियों का झण्डेवाला जहाज, एडमिरल डॉन लारेञ्जों अलमीड़ा व १४० मनुष्य नष्ट हुए।

सन् १५१० ई० में महमूद पाटण गया। यह उसकी अन्तिम यात्रा थी। उसने वहाँ के बड़े बड़े आदमियों को बुलाकर उनसे भेंट की। फिर वह अहमदाबाद लौट आया और तीन महीनों तक बीमार रहा। इसी बीच में उसने अपने पुत्र खलील खां को बुलवाया और उसकी अंतिम सलाम लेकर हिजरी सन् ९१७ (१५११ ई०) के रमजान महीने की तीसरी तारीख सोमवार को वह इस असार संसार को छोड़कर चल बसा। उसे सरखेज में दफ़नाया गया था जहां पर उसकी क़ब्र अब तक मौजूद है।[2]

(१) उस समय ईडर पर राव भान का पुत्र सूरजमल राज्य करता था।

(२) मीराते अहमदी। फरिश्ता ने लिखा है कि उसकी मृत्यु हि० स० ९१७ के रमज़ान महीने की दूसरी तारीख मंगलवार को हुई थी। उस समय उसकी आयु ७० वर्ष ११ महीने की थी। उसने ५५ वर्ष १ महीना और दो दिन राज्य किया।

अहमदाबाद के सुलतानों में महमूदशाह, यदि सबसे महान् नहीं तो अत्यन्त लोकप्रिय अवश्य हुआ है ।'जैसे हिन्दू सम्राट् सिद्धराज के विषय में कितनी ही किम्वदनियाँ और अद्भुत कथाएं प्रचलित हैं वैसे ही इसके विषय में भी कितनी ही बातें प्रसिद्ध हैं ।' महमूद की शारीरिक गठन, शूरता, बल, न्याय, परोपकार, इसलाम पर दृढ़ आस्था, नियम पालन में दृढ़ता और विचारशक्ति की श्रेष्ठता का समानरूप से बखान हुआ है । उसकी 'बेगड़ा' उपाधि के बारे में कुछ लोगों का कहना है कि जिस बैल के सींग दाएं बाँएं लम्बे (एक आदमी दूसरे से मिलते समय हाथ बढाए इसतरह) हों उस बैल को हिंदी में बेगड़ा कहते हैं; सुलतान की मूछें इसी तरह की थीं इसलिए लोग उसे बेगड़ा कहते थे । दूसरा मत यह है कि सुलतान महमूदने जूनागढ़ और चम्पानेर के दो किले जीते थे इसलिए वह (बे–दो; गढा–किला) बेगड़ा (दो किलों का विजेता) कहलाता था ।[1]

कहते हैं कि, वह बहुत खाने वाला था और इतने बड़े राज्य का स्वामी और राजवैभव में रहनेवाला होने पर भी उसकी जठराग्नि बहुत प्रबल थी । वह कला प्रेमी था और इमारतों का उसे बहुत शौक था । गुजरात की मुसलमानी इमारतों में से अधिकांश के साथ महमूद बेगड़ा का नाम सम्बद्ध है । 'मुश्तफाबाद और महमूदाबाद (चम्पानेर) के अतिरिक्त वात्रक नदी के किनारे उसने अपने नाम से एक और शहर बसाया था जिसके चारों ओर कोट खिंचवाकर अच्छी अच्छी इमारतें बनवाईं थीं । इसी नदी के किनारे पर उसने एक उत्कृष्ट महल बनवाया था जिसके अवशिष्ट अब तक वर्तमान हैं ।[2] वह इन्हीं तीन नगरों में से एक में प्रायः बना रहता था परन्तु गरमी के दिनों में जब मतीरे (तरबूज) पक जाते हैं तब अहमदाबाद अवश्य जाता था । मीराते अहमदी के कर्ता ने आगे चलकर लिखा है कि गुजरात देश में जितने शहरों, कसबों और गाँवों में फलों के पेड़ हैं वे सब महमूद के समय में लगाए हुए हैं ।[3]

मीराते सिकन्दरी में लिखा है कि अपनी बीमारी की अवस्था में उसने फरमाया कि शाहज़ादा खलील खां को बुलाओ । परन्तु, वह आकर पहुंचा इससे पहले ही हि० स० ९१७ के मुबारक रमज़ान महीने में सोमवार के दिन दोपहर की नमाज़ के वक्त इस फानी दुनिया को छोड़ कर अनन्त धाम के लिए विदा हो गया । . . . . उस समय उसकी उम्र ६७ वर्ष और तीन महीने की थी ।

कॉमिसरियट–हिस्ट्री आफ गुजरात भा० १ पृ० २०७ में लिखा है कि उसकी मृत्यु २३ नवम्बर १५५१ ई० को हुई । उस समय वह अपने ६७ वें वर्ष में था ।

(१) फरिश्ता ।

(२) मीराते अहमदी (१८५६ ई०)

(३) शाखोटैः कुटजैश्च शालमलिवनैश्च्छन्नाश्च या भूमय-
स्तत्राशोकरसालबाल-बकुलै रम्याः कृताः वाटिकाः ।
आक्रांताः किटिकोटिमर्क्कटकुलैर्हर्यक्षऋक्षैश्च या-
स्तत्रानेन पुराणि पुण्यजनतापूर्णानि क्लृप्तानि च ।। २४ ।। रा. वि. सर्ग ।

जहाज़ी लड़ाइयाँ लड़ने के कारण उसकी प्रसिद्धि यूरोपीय देशों तक फैल गई थी। मिस्टर एल्फिन्स्टन ने लिखा है कि इस बादशाह के विषय में तत्कालीन प्रवासियों के बड़े भयानक विचार थे। Bartema (बार्टिमा) और Barbosa (बार्बोसा) दोनों ही में उसका विस्तारसहित वर्णन किया गया है। एक यात्री ने उसके शरीर की बनावट के विषय में भयंकर वर्णन लिखा है। उसके असाधारण मात्रा में भोजन करने और उसके शरीर में विष होने के बारे में दोनों ही लेखक सहमत हैं। विषैला भोजन करते करते उसके शरीर में इतना विष फैल गया था कि यदि कोई मक्खी उड़ती उड़ती आकर बैठ जाती तो तुरन्त मर जाती थी। सत्तावान् मनुष्यों को दण्ड देने की उसकी साधारण रीति यह थी कि पान खाकर उन पर पीक की पिचकारी मार देता था। बटलर ने "खम्भात के राजा की बात" लिखी है जिसमें उसका नित्य का भोजन दो ज़हरी साँप और एक ज़हरी मेंढ़क लिखा है। मीराते सिकन्दरी में लिखा है कि साधारण भोजन के अतिरिक्त १५० सोन केले व गुजराती तौल का सवा मन रायता उसके नित्य के भोजन में सम्मिलित थे। रात को सोते समय दो बड़े बड़े भगोने पूओं व बड़े भुजियों के भरे हुए उसके पलंग के दोनों ओर रख दिए जाते थे। ज़ब तक नींद न आती वह इधर उधर करवट लेकर उनको खाता रहता था। बीचमें नींद खुलजाने पर भी वह उन्हें खाने लगता था। वह प्रायः कहा करता था कि यदि वह बादशाह न होता तो उसकी जठराग्नि किस प्रकार शान्त होती ?

मीराते सीकन्दरी में इस सुलतान के चरित्र एवं राज्य-प्रबन्ध के विषय में जो विवरण लिखा है वह इस प्रक़ार है—

"यहाँ यह बात प्रकट करना है कि यह सुलतान गुजरात के सुलतानों में सब से उत्तम था। न्याय में, धर्म में, संग्राम में, इसलाम धर्म के नियमों का पालन करने में, बाल्य, यौवन, और वृद्धावस्था में सदैव एकसार उत्तम बुद्धि रखने में, शारीरक सामर्थ्य में और उदारता में अद्वितीय था। इतने बड़े राज्य वैभव और महान् देश का स्वामी होते हुए भी उसकी पांचन-शक्ति बहुत प्रबल थी।

(इसके राज्य में) "गुजरात देश में एक नई स्फूर्ति आई जो कितने ही समय पूर्व तक न आई थी। सेना सुव्यवस्थित थी और प्रजा निरुपद्रव थी। साधु-सन्त स्थिर चित्त से भजन में व्यस्त रहते थे और व्यापारी अपने व्यापार और लाभ से प्रसन्न थे। देश में सर्वत्र शान्ति थी और चोरों का भय नहीं था। सोने की थैली लिये हुए अकेला आदमी पूर्व से पश्चिम तक घूम आता है। हे सम्राट ! तेरे भय से संसार की सभी दिशाएं निर्भय हैं। इस प्रकार किसी को पुकार करने की आवश्यकता ही न पड़ती थी।"

"सुलतान की आज्ञा थी कि कोई अमीर अथवा सैनिक अधिकारी युद्ध में मारा जाय या स्वाभाविक रीति से मर जाय तो उसकी जागीर उसके पुत्र को दी

जाय, यदि उसके पुत्र न हो तो जागीर का आधा भाग उसकी पुत्री को दे दिया जाय, यदि पुत्री भी न हो तो उसके आश्रितों के लिये ऐसा प्रबन्ध कर दिया जाय कि उनको जीवन-यापन में किसी प्रकार का कष्ट न मिले। कहते हैं कि एक बार एक मनुष्य ने आकर कहा कि अमुक अमीर मर गया है और उसका पुत्र उस पद के योग्य नहीं है। सुलतान ने कहा कि वह पद उस लड़के को अपने योग्य बना लेगा। इसके बाद ऐसी बातों में किसी को कुछ कहने का साहस न पड़ा।

इस सुलतान के समय में प्रजा सुखी थी इसका कारण यह था कि अकारण ही अत्याचार करके किसी जागीरदार की जागीर नहीं छीनी जाती थी और सरकार द्वारा निश्चित लगान ही ले लिया जाता था। जब सुलतान महमूद शहीद के समय में कार्यकर्ता मन्त्रियों ने देश की उपज की तपास की तो ज्ञात हुआ कि उस समय देश में पहले से दशगुनी उपज अधिक होने लगी थी और गावों में कोई भी किसान निर्धन नहीं था। व्यापारियों को लुटेरों की कोई चिन्ता न थी क्योंकि व्यापार के सभी मार्ग सुरक्षित थे और सुलतान के राज्य में चोर की उत्पत्ति ही न होती थी। साधु-सन्त शांन्ति से रहते थे क्योंकि सुलतान स्वयं इस मान्य-वर्ग का शिष्य एवं भक्त था। वह प्रति वर्ष इनकी जागीरें बढ़ाता रहता था और इसके अतिरिक्त भी सन्तों की इच्छानुसार उन्हें अनुदान दिया करता था। यात्रियों के लिये उसने बड़ी-बड़ी धर्मशालाएं बनवाईं और स्वर्ग के समान सुन्दर पाठशालाओं तथा मसजिदों का निर्माण कराया। सुलतान बड़ा न्यायी था और उसके राज्य म किसी को हानि पहुंचाने का किसी का साहस न होता था। उसके विषय में एक कविता में लिखा है कि "अपराधियों पर तुम्हारा ऐसा आतङ्क छाया हुआ है कि कोई कबूतर पकड़ने के लिये बाज़ नहीं छोड़ सकता है"।

"छोटे बड़े सभी वर्गों के लोगों का मत है कि महमूद बेगड़ा जैसा बादशाह गुजरात में पहले नहीं हुआ और न्याय में तो उस के बाद भी कोई समानता न कर सका। उसने जूनागढ़ का किला, सोरठ देश, चाँपानेर का किला तथा और आसपास के प्रदेशों को जीतकर वहां पर हिन्दू रीति-रिवाजों को नष्ट कर दिया और इसलामी रीति-रिवाजों को प्रचलित किया, इसलिये कयामत तक जो भी कार्य इन प्रदेशों में होंगे वे उसी के नाम लिखे जायेंगे। उसका पौत्र बहादुरशाह यद्यपि देश जीतने में उससे बढ़ कर हुआ तथापि अनुभव में वह सुलतान महमूद को नहीं पा सकता था। सुलतान तो इन दोनों ही बातों में बढ़ कर था।

"युवा प्रतिभाशाली और भाग्यवान् वह ऐसा था कि वैभव में युवक और युक्ति प्रयुक्ति में प्रौढ़ था।"

"जिस समय यह सुलतान यहां राज्य करता था उसी समय खुरासान में सुलतान हुसेन मिर्ज़ा राज्य करता था और बेनमुन वज़ीर मीरअली उसके प्रधान मंत्री

के पद पर सुशोभित था। मुल्लां तथा मनोहर काव्यकर्ता के स्थान पर मौलाना जामी प्रतिष्ठित थे जो ईश्वरीय मार्ग एवं मोक्ष प्राप्ति के परम साधन ज्ञान में अनुभवी थे। उसी समय दिल्ली के तख्त पर सुलतान सिकन्दर बहलोल लोदी विराजमान थे। उनके वजीर परम बुद्धिमान और दूरदर्शी जीयान बहलोलखां लोदी थे। उसी समय मांडू के तख्त पर सुलतान महमूद खिलजी के पुत्र सुलतान गयासुद्दीन बैठे थे जिनके शासन और उदारता की ख्याति चारों ओर फैल रही थी। उसी समय दक्षिण की गद्दी पर सुलतान महमूद बहमनी वर्तमान था। संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि, कितने ही वर्षों बाद सुलतान महमूद गजनवी की आत्मा सुलतान महमूद बेगड़ा के रूप में अवतार लेकर आ गई थी क्योंकि उसके सभी कार्य उतने ही प्रतिष्ठित थे जितने कि उस महान् सुलतान के थे।",

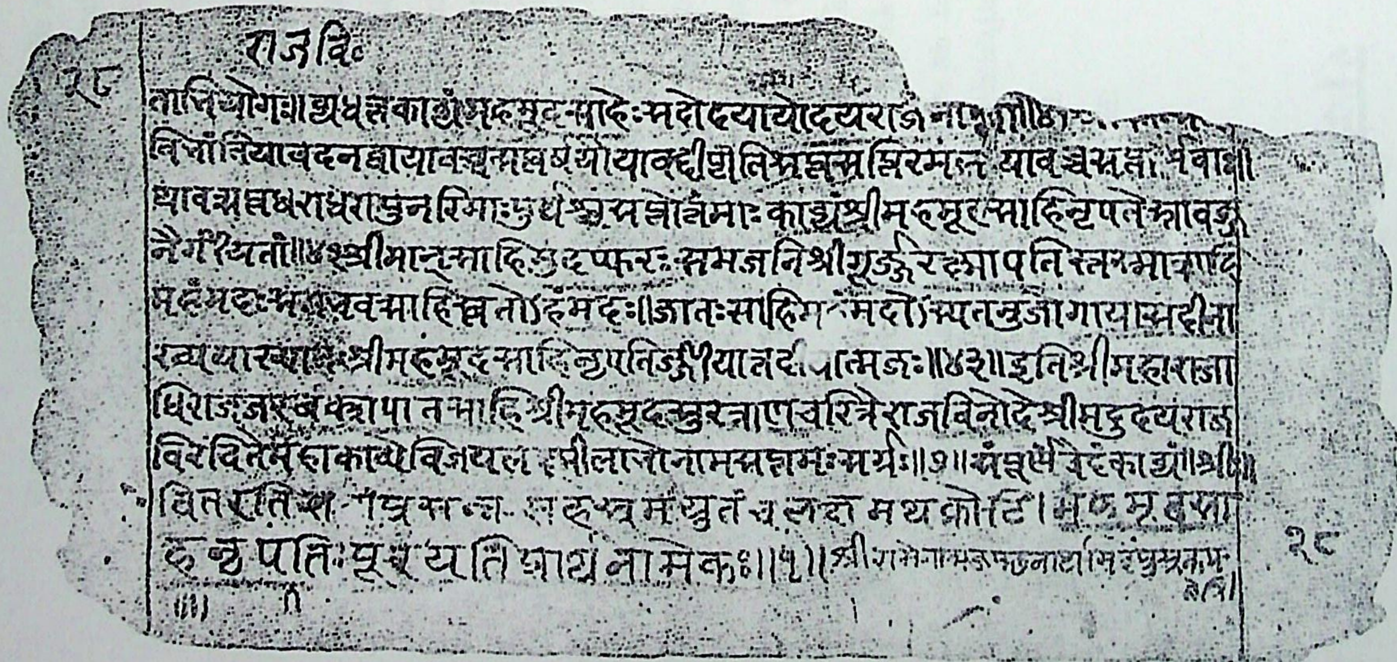
"कहते हैं कि जिस दिन सुलतान महमूद गद्दी पर बैठा उस दिन उसके जमाई खुदावन्द खां ने जो बड़ा विद्वान और वक्तृत्व कला में निपुण था, सुलतान के हाथ में दीवान हाफिज की पुस्तक देकर शकुन देखने के लिये प्रार्थना की। ज्यों ही सुलतान ने पुस्तक खोली अनायास उसमें इस आशय की कविता निकली .... "अरे जिसके शरीर पर बादशाही का जलवा आ रहा है और जिसके नमूने के दो मोतियों से बादशाही झलक रही है।"

"इस सुलतान के राज्य में कभी अनाज महँगा नहीं हुआ। प्रत्येक चीज सस्ते मूल्य पर प्राप्त होती थी। गुजरात के लोगों का कहना है कि गुजरात में ऐसी सस्ताई कभी नहीं देखी थी। चंगेजखां मुग़ल की तरह इसकी सेना ने भी कभी पराजय का अनुभव नहीं किया था। सदा नई-नई विजय इसको प्राप्त होती थी। सुलतान ने एक आदेश जारी किया था कि सेना के आदमियों में से कोई ऋण न ले। उनके लिये सरकारी कर का कोई अंश अलग निर्धारित करके रख दिया जाता था जिसमें से सिपाही लोग आवश्यकतानुसार रकम उधार लेते थे और वापस जमा करा दिया करते थे। इस प्रबन्ध से व्यापारी लोग अवश्य ही कुछ संकट में पड़ गये थे और इसलिये वे उसकी आलोचना करते हुये उसे बुरा कहा करते थे। सुलतान बारम्बार कहा करता था कि जो मुसलमान ब्याज खाता है वह धर्म-युद्ध में नहीं टिक सकता। इसी कारण परमात्मा उसे युद्ध में विजयी करता था।"

"ईश्वर की कृपा से गुजरात में आम, अनार, रायण, जामुन, नारियल, बेल और महुआ आदि के अनेक जाति के पेड़ प्रचुरता से मिलते हैं वे सब इसी महाप्रतापी सुलतान के सत्प्रयत्नों के फल हैं। प्रजा में जो कोई अपनी भूमि में पेड़ लगाता था उसको सहायता दी जाती थी। इसी कारण जनसाधारण में बागों की रचना करने व पेड़ लगाने की प्रवृत्ति बढ़ गई थी। इस सम्बन्ध में कहा जाता है कि सड़क पर या किसी झोपड़ी के आगे लगाया हुआ पेड़ देख कर सुलतान

अपने घोड़े को रोक लेता और पेड़ लगानेवाले से पूछता कि इस वृक्ष को पानी कहां से लाकर पिलाते हो। यदि वह पानी का स्थान कहीं दूर पर बतलाता तो सुलतान कृपापूर्वक वहीं कुंआ खुदवा देता और पेड़ बड़ा होने पर लगानेवाले को इनाम देता। फिरदौस बाग जो ५ कोस लम्बा और १ कोस चौड़ा है इसी सुलतान का लगवाया हुआ है। शआबान बाग भी जो स्वर्ग की समानता करता है इसी के समय में तैयार हुआ था। इसी प्रकार जब वह किसी खाली दुकान या मकान को देखता तो वहां के अधिकारी या नौकरों से इसका कारण पूछता और तुरन्त ही उसको आबाद करने का प्रबन्ध करता था। इस प्रकार 'जो दाखिल होता है वह सही सलामत है' इस कुरान की आयत के अनुसार प्रजा उसके राज्य में सुखी थी।'

अनेक लड़ाइयों में विजयलाभ प्राप्त करने से उसकी वीरता व भवनों तथा बाग बगीचों से उसके कला-प्रेम का तो परिचय मिलता ही है, परन्तु कवि उदयराज विरचित प्रस्तुत राजविनोद काव्य से उसके चरित्र का एक और पहलू भी सामने आता है (जिसको प्रायः हमारे इतिहासकार विशेष महत्त्व नहीं दिया करते हैं); वह यह है कि वह कविता प्रेमी भी था। अवश्य ही, कट्टर मुसलमान होते हुए भी, संस्कृत में निगुम्फित उसके इस यशोगान ने उसके मूलतः हिन्दू हृदय को परम सन्तोष प्रदान किया होगा।



राजविनोद काव्यकी आदर्शभूत प्रतिका अन्तिम पत्र

कवि-उदयराजविरचितं

राजविनोदमहाकाव्यम् ।

॥प्रथमः सर्गः॥

॥ ॐ नमः सरस्वत्यै ॥ श्री जगत्कर्त्रे नमः ॥

जगत्कर्त्ता विजयते करुणावरुणालयः ।
राजरूपेण रमते यः प्रजानुग्रहेच्छया ॥१॥

राजन्यचूडामणिमत्युदारमाशास्महे श्रीमहमूदसाहिम् ।
कलानिधिर्यस्य पदं श्रयेते सरस्वती श्रीश्च समानमेव ॥ २ ॥

एतच्चरित्रे क्व लभेत पारं पदे पदे हन्त मतिः स्खलन्ती ।
उदारकीर्त्तेर्महमूदसाहेस्तावद्गुणानेव गुरूकरोमि ॥ ३ ॥

अमुष्य राज्ञां परमेश्वरस्य पूजोपहाराय मयोपनीतः ।
कवित्वपुष्पाञ्जलिरेषे रम्यः सन्तस्तदामोदभरं भजन्तु ॥ ४ ॥

उत्कर्षमालक्ष्य सदैव लक्ष्म्याः सौभाग्यलाभान्महमूदसाहेः ।
उत्सङ्गमुत्सृज्य पितामहस्य सरस्वती क्ष्मावलयं प्रपन्ना ॥ ५ ॥

प्रष्टुं क्वचित् केलि [पृ० १B] परां तनूजां चतुर्भुजस्येव दिशश्चतस्रः ।
विधेर्निदेशात् प्रथमो दिगीशः सहस्रमक्ष्णामदिशत् पृथिव्याम् ॥ ६ ॥

क्षणादथ क्षोणितलं विगाह्य मधुव्रतानामिव पङ्क्तिरक्ष्णाम् ।
पौरन्दरी श्रीमहमूदसाहेः पद्माकरे राजपुरेऽवतीर्णा ॥ ७ ॥

वीथीषु वीथीषु च राजधान्यां द्वारे नरेन्द्रस्य च मन्दिरेषु ।
श्रेणी सुरेन्द्रस्य दृशां व्यराजद् व्यालम्बिता वन्दनमालिकेव ॥ ८ ॥

दिवस्पतेर्नेत्रसहस्रमाला दीपावलिश्रीर्भवने भ्रमन्ती ।
आरात्रिकं संसदि कुर्व्वतीव प्राप्ता मुदा श्रीमहमूदसाहेः ॥ ९ ॥

सद्वृत्तिस्थपदक्रमा परिलसत्तर्कानुमेयोदरा
मीमांसाद्वयसुन्दरस्तनभरा तत्त्वार्थवादानना ।
वाग्देवी वरनव्यकाव्यरचनाशृङ्गारिणी प्रेक्षिता [पृ० २A]
सुत्राम्णा महमूदसाहनृपतेर्विद्वत्सभामाश्रिता ॥१०॥

ब्राह्मि ! ब्रह्मसभां सुभाषितरसत्यागेन रूक्षाननां
　　कृत्वा क्रीडसि भूतले किमिति सा शक्रेण पृष्टाऽब्रवीत् ।
सुत्रामन् महमूदसाहिनृपतेर्विद्याविदां संसदि
　　स्वच्छन्दप्रसरत्कवित्वलहरीं त्यक्तुं कथं शक्यते ॥११॥

इन्द्रः किं कमलापतिः किमथवा किं वा रतेर्वल्लभः
　　शृङ्गारः किमु मूर्तिमानिति बुधैस्सोल्लासमालोकितः ।
चञ्चच्चामरवीजितः सुमहच्छत्रेण विभ्राजितः
　　सोऽयं श्रीमहमूदसाहिनृपतिः सिंहासने राजते ॥१२॥

औदार्यं परमस्य शौर्यमतुलं गाम्भीर्यमुख्यान् गुणान्
　　प्रेक्ष्य श्रीमहमूदसाहनृपतेराश्चर्यमासेदुषाम् ।
केषां वा विदुषां दधीचिररुचिं धत्ते न चित्ते चिरं
　　कर्णः कर्णकटुत्वमेति [पृ०२B] भवति प्रायो बलिर्विस्मृतः ॥१३॥

पूर्णोऽन्यः सुरधेनवः फलभरैर्भुग्नाश्च कल्पद्रुमा-
　　स्ते चिन्तामणयो दृषद्गुरुतया योग्यास्तुलारोहणे ।
वीरश्रीमहमूदसाहनृपतेः सत्पात्रकोटिम्भरे-
　　र्जातं दानगुणेन सम्प्रति यतो याञ्चाविमुक्तं जगत् ॥१४॥

चिन्तामणेर्लोचनमाश्रिता श्रीः करं च कल्पद्रुमदानशक्तिः ।
वाणी विलासेन च दोग्धि कामान् जिष्णोर्जगत्यां महमूदसाहेः ॥१५॥

उच्चैर्द्विषद्भूधरलक्षपक्षच्छेदैककर्त्तुः शतकोटिभर्त्तुः ।
संलक्ष्यते श्रीमहमूदसाहेराखण्डलत्वं क्षितिमण्डलेऽपि ॥१६॥

यशोभरैः श्रीमहमूदसाहेर्वसुन्धरायां कुमुदावदातैः ।
उदस्य दोषाकरमब्जजन्मा विधित्सतां चन्द्रमसां सहस्रम् ॥१७॥

प्राच्यां प्रतीच्यामपि दिश्यवाच्यामुच्चैरुदी [पृ०३A] च्यामुदयं दधानः ।
प्रतापभानुर्महमूदसाहेः करोति निर्वैरितमः समस्तम् ॥१८॥

श्रीचन्द्रहासो महमूदसाहेः सृजत्यहो वैरिशिरांसि राहून् ।
तेषां यशश्चन्द्रमसः प्रतापभानोश्च सर्व्वग्रहणे रणेषु ॥१९॥

सोत्तालपातं रिपुकन्धरासु तूर्यस्वनैस्ताण्डविता रणेषु ।
कृपाणयष्टिर्महमूदसाहेर्यशःप्रसूनाञ्जलिमातनोति ॥२०॥

प्रवर्तितं दक्षिणवामभागयोर्जवेन पश्यद्भिरलक्षितक्रमम् ।
धनूंहि शार्ङ्गं महमूदभूपतेर्व्यनक्ति युद्धेषु चतुर्भुजश्रियम् ॥२१॥

बलीयसा श्रीमहमूदभूभुजा हता हि ये हेतिभिराहवेऽहिताः ।
विभिद्य ते मण्डलमंशुमालिनो गतास्स्वराखण्डलदृष्टचण्डताः ॥२२॥

अक्ष्णां जिघृक्षति सहस्रकरः सहस्रमस्मात् सहस्रकरतां च सहस्रनेत्रः ।
श्रीपा [पृ० ३ B] तसाहमहमूदनृपप्रयाणे रेणुव्रजे दिशि दिशि प्रविजृम्भमाणे ॥२३॥

किं भास्करोऽयमुदयाचलमध्यवर्ती जम्भारिरभ्रमुपतिं किमथाधिरूढः ।
इत्थं वदन्ति समुदं महमूदसाहं दृष्ट्वा विशिष्टमतयो वरवारणस्थम् ॥२४॥

दुर्नीतिदावदहनं निजमण्डलाग्रधाराजलैश्शमयता सकलावनीयम् ।
एतेन सान्द्रकरुणाम्बुघनेन कामं सम्पत्तिभिस्सपदि पल्लवितेव भाति ॥२५॥

मुक्तोज्ज्वलाभिरभितः किलशातकुम्भधाराभिरग्रकरपल्लवसम्भृताभिः ।
पट्टाभिषेकसमये स्वयमेव राज्ञा प्रेम्णा घनेन महिषीव सुधाभिषिक्ता ॥२६॥

लीना क्वचित्क्वचिदपि प्रकटीभवन्ती भ्रान्त्वा जगज्जडतयाधिपयोधिखिन्ना ।
साऽहं प्रकाशमधुनाऽधिगताऽस्मि लोके विद्याविवेकरसिकस्य सदस्यमुष्य ॥२७॥ [पृ० ४A]

इति निगद्य सुपद्यमनोरमं सुचरितं महमूदमहीपतेः ।
शतमखाभिमुखी किल भारती पुनरवोचदिदं मधुरं वचः ॥२८॥

श्रीमान् साहिमुदप्फरस्समजनि श्रीगूर्ज्जरक्ष्मापति-
स्तस्मात् साहिमहम्मदस्समभवत् साहिस्ततोऽहम्मदः ।
जातस्साहिमहम्मदोऽस्य तनुजो गायासदीनाख्यया
ख्यातः श्रीमहमूदसाहिनृपतिर्जीयात् तदीयात्मजः ॥२९॥

॥ इति श्रीमहाराजाधिराज-जरबक्सपातसाह-श्रीमहमूदसुरत्राणचरित्रे राजविनोदे महाकाव्ये सुरेन्द्रसरस्वतीसम्वादो नाम प्रथमस्सर्गः ॥

॥ द्वितीयः सर्गः ॥

वंशस्सहस्रांशुभवो जगत्यां जागर्त्यसौ राजभिरर्च्चनीयः ।
कर्णोपमो यत्र किलावतीर्णः श्रीमान् पुरा साहिमुदप्फरेन्द्रः ॥ १ ॥

लीनस्य वार्द्धौ[1] कलिकालभीत्या कृष्णस्य साहाय्यचिकी[पृ० ४ B]र्षयेव ।
दिल्लीपुराद् गूर्ज्जरदेशमेत्य दधार यो मूर्द्धनि सितातपत्रम् ॥ २ ॥

समुद्गिरन् कच्छमहीषु येन डिण्डीरपाण्डूनि यशांसि खड्गः ।
स्फूर्जद्द्विषच्छोणितपङ्कलिप्तः प्रक्षालितः पश्चिमवारिराशौ ॥ ३ ॥

(१) वार्द्धिः—वारिधिः—समुद्रम् ।

विलङ्घ्य वारांनिधिमेकवीरो लङ्काभिधं द्वीपमगात् कपीन्द्रः ।
तत्स्पर्द्धयेवोग्रतरश्चचार द्वीपेषु सप्तस्वपि यत्प्रतापः ॥ ४ ॥

मुमोच वन्दीकृतमल्पखानमनल्पवीर्यं बलवत्तरो यः ।
वंश्यास्ततो मालवराजबन्दिमोक्षपदाख्यं विरुदं वहन्ति ॥ ५ ॥

तस्यात्मजस्साहिमहम्मदोऽभूद् यस्य क्षमाभोगपुरन्दरस्य ।
औदार्य्यसूर्येण जगत्यजस्रं व्यदारि दारिद्रचमयं तमिस्रम् ॥ ६ ॥

दधार शस्त्रं न रिपुर्न मित्रं यस्मिन् दधत्यायुधमेकवीरे ।
पूर्वस्तत[पृ० ५ A]स्सङ्गरभङ्गभीतेरन्यत् पुनस्तस्य बलप्रतीतेः ॥ ७ ॥

उदित्वरो यस्य बभौ जगत्यां सहस्रभानुप्रतिमः प्रतापः ।
यो मल्लखानाख्यमुलूकमिन्द्रप्रस्थस्थमुद्वेजितवान् द्विषन्तम् ॥ ८ ॥

यस्य प्रसिद्धैर्द्विरदैर्विभिन्नप्राकारसौधस्फुरदट्टमालाः ।
अद्याप्यहो नन्दपदाधिनाथा भल्लूकवत् पल्लिवने भ्रमन्ति ॥ ९ ॥

तस्मात् समुद्रादिव पूर्णचन्द्रः श्रीमानभूत् साहिरहम्मदेन्द्रः ।
निरस्तदोषावसरैरशोभि ज्योत्स्नोज्ज्वलैर्यस्य जगद् यशोभिः ॥१०॥

हुशङ्गसाहेरधिवासदुर्गमाक्रामता मण्डपमाग्रहेण ।
येनोच्चकैराचकृषे करेण पदे पदे मालवमण्डलश्रीः ॥११॥

विभज्य दुर्गाणि निहत्य वीरान् हठान् महाराष्ट्रपतिं विजित्य ।
जग्राह [पृ० ५ B] रत्नाकरसारजातमनर्गलैर्यः स्वबलैर्बलीयान् ॥१२॥

कुर्वन्तु गर्वं बहवोऽप्यखर्व्वमुर्व्वीश्वराः श्रीगुणगौरवेण ।
अहम्मदेन्द्रस्य जनानुरागसौभाग्यलेशं न परे लभन्ते ॥१३॥

आनन्दनः सुमनसामथ नन्दनोऽभूद् भाग्यश्रियां निधिरहम्मदपातसाहेः ।
गायासदीन इति साहिमहम्मदेन्द्रः क्षोणीभुजां मुकुटघृष्टपदारविन्दः ॥१४॥

सूर्यो दिवैव कुरुते जगति प्रकाशं कान्तिं शशी वितनुते नियतं निशायाम् ।
श्रीमन्महम्मदनराधिपतेः पृथिव्यां दृष्टः प्रतापयशसोर्युगपत्प्रचारः ॥१५॥

रूपश्रियैव विजितः समभून् मनोभूः श्रीमन्महम्मदनराधिपतेरनङ्गः ।
अस्त्रं स्त्रियः खलु जगज्जयिनोऽपि तस्य वीक्ष्यैव तत्क्षणममुं विवशी बभुवुः ॥१६॥

यो भारतस्य [पृ० ६ A] भरतस्य च सम्प्रयोगादुच्चैरजायत नयेऽभिनये प्रवीणः ।
वीरो रणे वितरणे च विशिष्टशक्तिः कर्णार्जुनावपि जिगाय जगत्प्रसिद्धौ ॥१७॥

यस्य प्रतापभरपावकसङ्गमेन दग्धस्य पावकगिरेः शिखरान्तरेषु ।
प्रक्षन्त जर्ज्जरसुधाविधुराणि भस्मराशिप्रभाणि रिपवो निजमन्दिराणि ॥१८॥

नित्यप्रसादपरिवर्द्धितहर्षयोगाः सम्मानदस्य महता महितापकर्तुः ।
यस्य प्रभोः कनकवेत्रधराः पुरस्तात् क्षोणीभुजोऽपि परिचारकतां प्रपन्नाः ॥१९॥

तस्यात्मजः किल महम्मदपातसाहेः श्रीमानयं विजयते महमूदसाहिः ।
रागेण गूर्ज्जरभुवांऽप्युपसेव्यमानो धारापुरीकरपरिग्रहसाग्रहो यः ॥२०॥

पूर्व्वैर्विशिष्टमतिभिर्विहिताः क्षितीन्द्रैर्येषां प्रसाधनवि[पृ० ६ B]धौ वहुधा प्रयत्नाः ।
दुर्गाण्यनेन सहसा प्रभुणा स्वशक्त्या भग्नानि तानि बलवद्रिपुरक्षितानि ॥२१॥

पाणौ चकास्ति महमूदनरेश्वरस्य खड्गो रणे विभजनाक्षरपट्ट एषः ।
प्रत्यर्थिने दिशति यद्भुवमर्थिदैन्यं प्रत्यर्थिवैभवमिहार्थिजनाय दत्ते ॥२२॥

एतच्चमूचरतुरङ्गमचङ्क्रमार्थं क्ष्मामण्डलं खलु कुलाचलक्लृप्तसीमम् ।
अब्धिं विलङ्घ्य दहति द्विषतो विमुक्तमर्य्यादमस्य जगति प्रसरन् प्रतापः ॥२३॥

शाखोटैः कुटजैश्च शाल्मलिवनैश्च्छन्नाश्च या भूमय-
　　स्तत्राशोकरसालवालबकुलैरम्याः कृता वाटिकाः ।
आक्रान्ताः किटिकोटिमर्क्कटकुलैर्हर्यक्षत्र्यक्षैश्च या-
　　स्तत्रानेन पुराणि पुण्यजनतापूर्णानि क्लृप्तानि च ॥२४॥

उद्दण्डस्फुटपुण्डरीकरुचिरच्छायाः परं विस्फुरद्-[पृ० ७ A]
　　वीचीचामरवीजिताः परिसरत्सद्वाहिनीसङ्गताः ।
राजन्ते स्थिरकम्बुकूर्म्मकरैः कोशैः समृद्धाः सदा
　　कासाराः क्षितिपा इवास्य नृपतेर्हंसोल्लसत्कीर्त्तयः ॥२५॥

सौन्दर्ये मकरध्वजप्रतिनिधिं दाने च कर्णोपमं
　　कारुण्ये रघुनन्दनेन सदृशं भीमेन तुल्यं रणे ।
वाचां सिद्धिषु वाक्पतेः समधिकं लीलासु लक्ष्मीवरं
　　भर्त्तारं महमूदसाहमनघं वाञ्छन्ति नित्यं प्रजाः ॥२६॥

आलोकोद्यतलोकवारिधिसदाऽऽनन्दोर्म्मिसंवर्द्धनं
　　दर्प्पान्धः प्रसरत्प्रतीपनृपतिध्वान्तौघविद्ध्वंसनम् ।
वीरश्रीमहमूदसाहनृपतेः शश्वद् धृतं मूर्द्धनि
　　श्वेतच्छत्रमुदित्वरं विजयते पूर्णेन्दुशोभाधरम् ॥२७॥

उच्चैरङ्कुशतां बिभर्ति वलिनां या सर्व्वदा मौलिषु
प्रत्यर्थिक्षितिपालमूर्द्ध[पृ० ७ B]सु पुनर्या चक्रवद् भ्राम्यति ।
मान्यानां महतां च शेखरपदे मालेव या भ्राजते
वीरश्रीमहमूदसाहनृपतेराज्ञा जगद् रक्षति ॥२८॥

मर्य्यादां न विलङ्घयन्ति निधयो वारामवारोर्म्मय-
श्चन्द्रार्क्कावुदयास्तकालनियमं नैवाप्यतिक्रामतः ।
यस्याज्ञावशतश्चरन्ति परितस्तारा निरालम्बने ।
सोऽयं श्रीमहमूदसाहमवतात् कर्त्ता जगत्तारकः ॥२९॥

इत्याशीर्वचनपरम्पराः सृजन्ती वाग्देवी विरचितनव्यकाव्यबन्धा ।
शिष्याय त्रिदशगुरोः पुरोगताय व्याकर्त्तुं पुनरुदयुङ्क्त राजचर्य्याम् ॥३०॥

श्रीमान् साहिमुदफ्फरस्समजनि श्रीगूर्ज्जरक्ष्मापति-
स्तस्मात् साहिमहम्मदस्समभवत् साहिस्ततोऽहम्मदः ।
जातस्साहिमहम्मदोऽस्य तनुजो गायासदीनाख्यया
ख्यातः श्रीमहमूदसाहिनृपति[पृ० ८ A]र्जीयात् तदीयात्मजः ॥३१॥

॥ इति श्रीमहाराजाधिराज-जरवक्सपातसाह-श्रीमहमूदसुरत्राणचरित्रे राजविनोदे महाकाव्ये वंशानुसङ्कीर्तनो नाम द्वितीयः सर्गः ॥

॥ तृतीयः सर्गः ॥

उच्चैस्तरां कुञ्जरगर्जितेन प्रहृष्यमाणो हयहेषितेन ।
सान्द्रेण नादेन च दुन्दुभीनां प्रबुद्ध्यतेऽसौ समये नरेन्द्रः ॥ १ ॥

उल्लासयन्त्यो रहसि स्वरेण वीणाक्वणैस्सम्वदतानुरागम् ।
सौभाग्यवत्योऽस्य विलासगीतैः प्राभातिकं मङ्गलमाचरन्ति ॥ २ ॥

आलोकनीयं घनपक्ष्मलाभ्यां विलोचनाभ्यामलिमञ्जुलाभ्याम् ।
मुखारविन्दं स्वयमाश्रिताऽस्य प्रबोधलक्ष्मीर्मुदमादधाति ॥ ३ ॥

प्राभातिकाचारविधौ जलेन प्रक्षालितं वीक्ष्य मुखं नृपस्य ।
सरोरुहं मुञ्चति नाम्बुवासं शशी पुनर्मज्जति वारि[पृ० ८ B]राशौ ॥ ४ ॥

सुवर्णवर्णेऽस्य विशेषमङ्गे कंवर्ण्यरागः कुरुतेऽधिवर्ण्यम् ।
अलंकृतानेन कुरङ्गनाभिः श्रीखण्डकाश्मीरविलेपनश्रीः ॥ ५ ॥

विलासिनः श्रीमहमूदसाहेः सद्भिः सभायामभिशोभितायाम् ।
कर्पूरवासैः ककुभां मुखानि ताम्बूलयोगः सुरभी करोति ॥ ६ ॥

मृणालसूत्रैरिव निर्म्मितं यद् अयं नवीनैर्मृदुलं महीन्द्रः ।
वासः शरच्चन्द्रमरीचिगौरमङ्गस्य तन्मण्डनमाबिभर्ति ॥ ७ ॥

विश्लेष्य पूष्णोर्वपुषः प्रयत्नात् त्वष्ट्रेव पूर्वं घटितं मयूखैः ।
रत्नप्रभाभूषितदिग्विभागमयं महीन्द्रो मुकुटं बिभर्ति ॥ ८ ॥

परिस्फुरत्कुण्डलपद्मरागप्रभाङ्कुरै रञ्जितमास्यमस्य ।
स्मितांशुलेशैर्हसतीवगूढं बालारुणस्पृष्टसरोजलक्ष्मीम् ॥ ९ ॥

अलं विशालं नृहरेर्विभाति वक्षःस्थलं श्रीमहमूदसाहेः । [पृ० ९ A]
लक्ष्मीर्यदालिङ्ग्य सदा सहारं मुदा करोति प्रमदाविहारम् ॥१०॥

अयं भुजाभ्यां स्फुरदङ्गदाभ्यामालिङ्गिताभ्यां चतुरङ्गलक्ष्म्या ।
विराजते श्रीमहमूदसाहिः साम्राज्यमुद्राङ्कितपाणिपद्मः ॥११॥

पादारविन्दं महमूदसाहेः श्रियोऽधिवासं वयमानमामः ।
दारिद्र्यसन्तापनुदे सदैव यदातपत्रीक्रियते धरित्र्या ॥१२॥

आत्मानमादर्शतले सलीलमालोकयन्तं महमूदसाहिम् ।
मुह्यन्ति साक्षान् मदनावतारमुदीक्ष्यमाणा मदिरायताक्ष्यः ॥१३॥

आसीनमष्टापदपीठपृष्ठे राजानमेनं नयनाभिरामम् ।
नीराज्य नार्य्यो नवरत्नदीपैर्मुक्ताक्षतैः सस्पृहमर्चयन्ति ॥१४॥

एवं सदान्तःपुरसुन्दरीभिर्मुदा प्रसन्नो वरिवस्यमानः ।
बहिःसमाजस्थितराज [पृ० ९ B] लोकविलोकनेच्छां सफली करोति ॥१५॥

सिंहासनं श्रीमहमूदसाहे सहेलमारोहति राजसिंहे ।
जयेतिशब्दः प्रसरन् पुरस्ताज्जनस्य कर्णोत्सवमातनोति ॥१६॥

सहस्रपत्रं ध्रुवमातपत्रं शिरस्युदारं महमूदसाहेः ।
सुवर्णकुम्भश्रितकर्णिकाश्रि चकास्ति गारुत्मद् दण्डनालम् ॥१७॥ त-

तपः पुराऽतप्यत याभिरिन्दोरर्कस्य सम्पर्कमवाप्य भाभिः ।
एताश्चलच्चामरचारुभावान्नरेन्द्रचन्द्रं परिवीजयन्ति ॥१८॥

आलोकमात्रादपि सर्व्वलोकानाह्लादयन्तं कमनीयकान्तिम् ।
नेच्छन्ति के द्रष्टुमिमं नरेन्द्रं सतां सभापर्व्वणि पूर्णचन्द्रम् ॥ १९ ॥

सिंहासनस्थस्य पदारविन्दं दूरान् नमत्यस्य नरेन्द्रवृन्दम् ।
तत्पीठभूमौ विलुठत्युदारा तन्मौलिमाणिक्यमयूखधारा ॥ २० ॥

निरङ्कुशत्वेन मदातिरेका [पृ०१०A] नोज्झन्ति ये स्वैरविहारदर्प्पम् ।
स्थिता निषिद्धा महमूदसाहेर्द्वारि गजेन्द्रा इव ते नरेन्द्राः ॥२१॥

समं समास्थाय नरेन्द्रवृन्दैरकुण्ठकण्ठं मधुरं पठन्तः ।
वैतालिकाः श्रीमहमूदसाहं छन्दोविदः संसदि संस्तुवन्ति ॥२२॥

उपायनानामपि लक्षकोटी राजन्यकोटीरमणेः[1] पुरस्तात् ।
दृक्पातमात्रेण कृतप्रसादा यदृच्छयैवार्थिजना लभन्ते ॥२३॥

यतो यतो भूमिभुजोऽवतीर्णः प्रसादपूर्णः खलु दृक्तरङ्गः ।
ततस्ततः संसदि रत्नमालालक्ष्येण लक्ष्मीर्भजते विशाला ॥२४॥

आकर्ण्यते कर्णविशेषवर्ण्यात् सुवर्णवर्षान् महमूदसाहेः ।
प्रागेव सिद्धार्थमनोरथत्वाद् देहीति कस्यापि न दीनशब्दः ॥२५॥

कवीश्वराणां महमूदसाहेर्द्वारि प्रसादाधिगता द्विपेन्द्राः ।
दानाम्बुना कीर्तिसरोजि [पृ०१०B] नीनां स्फुटैर्मृणालैरिव भान्ति दन्तैः ॥२६॥

कवित्वरूपेण महाकवीनां कीर्त्तिः स्फुरन्ती महमूदसाहेः ।
विगाहते राजसभान्तराणि सुधाभिषेकोत्सवमावहन्ति ॥२७॥

सिंहासने भाति नरेश्वरोऽसौ व्याप्नोति तेजोमहिमाऽस्य विश्वम् ।
कोशं श्रयत्यस्य कृपाणयष्टिराज्ञामयं रक्षति दिक्षु चक्रम् ॥२८॥

आक्रम्य दिग्दशकचक्रमपाकरिष्णोरन्धं तमो गगनमूर्द्धिन्गतस्य पूष्णः।
दृग्गोचरे चरति कोऽपि न भूतले यस्तुल्यो रणे वितरणे महमूदसाहेः ॥२९॥

उच्चैः प्रतापदहनं समरे प्रदीप्यज्जुह्वन् मुहुर्बहलशात्रवकीर्त्तिलाजान् ।
रत्नाकरोचितसमुज्ज्वलमेखलाया वीरः करग्रहमयं कुरुते धरायाः ॥३०॥

उल्लासयन् श्रियममुष्यकरः समुद्रः सान्द्राः प्रदा [पृ० ११ A] नलहरीरभितो बिभर्त्ति ।
यास्तन्वते दशदिगन्तरसैकतानि मुक्ताफलैरिव यशोभिरलंकृतानि ॥३१॥

इति दशशतनेत्रस्यापि देवी समक्षं क्षितिशतमखकीर्तिं कुर्व्वती ब्रह्मपुत्री ।
व्यलसदिह कटाक्षश्रेणिभृङ्गानुयातैः स्मितकुसुमसमूहैः पूजयन्ती समाजम् ॥३२॥

---

(१) कोटीरः—किरीटः

श्रीमान् साहिमुदफ्फरस्समजनि श्रीगूर्ज्जरक्ष्मापति-
स्तस्मात् साहिमहम्मदस्समभवत् साहिस्ततोऽहम्मदः ।
जातस्साहिमहम्मदोऽस्य तनुजो गायासदीनाख्यया
ख्यातः श्रीमहमूदसाहिनृपतिर्जीयात् तदीयात्मजः ॥३३॥

॥ इति श्रीमहाराजाधिराज-जरवक्सपातसाह-श्रीमहमूदसुरत्राणचरित्रे राजविनोदे महाकाव्ये सभासमागमो नाम तृतीयः सर्गः ॥[पृ० ११ B]

॥ चतुर्थः सर्गः ॥

भूयोऽप्यभाषत सुभाषितभावपूर्णा सा पूर्णचन्द्रवदना त्रिदशेन्द्रमेवम् ।
राज्ञोऽस्य वेत्रधरदत्तपदावकाशान् देशाधिपान् सदसि पश्य कृतप्रवेशान् ॥ १ ॥

देशस्य यस्य महिमानमिवोपगातुं गङ्गा विराजति सहस्रमुखी भवन्ती ।
वङ्गस्य तस्य नृपतिः प्रणतिं विधत्ते प्राचीपयोनिधिसमर्प्पितरत्नपाणिः ॥ २ ॥

मुक्ताफलान्यमलतारकसन्निभानि व्यक्तेन्दुखण्डशुचिशुक्तिपुटार्पितानि ।
अस्येश्वरस्य यशसा तुलया धृतानि राशीकरोति पुरतः प्रणिपत्य पाण्ड्यः ॥ ३ ॥

स्त्रीणां विचित्रवरवेशविभूषणानामग्रे निधाय शतकं हरिणेक्षणानाम् ।
आराधयत्यमुमनङ्गजिदङ्गरूपमङ्गाधिपः सरसनृत्यसमुत्कलोऽसौ ॥ ४ ॥

निर्गच्छतां प्रविशतां मुहु[पृ० १२A]रङ्गदेभ्यो हीरैश्च्युतैः क्षितिभुजां भुजघट्टनेन ।
द्वारप्रदेशमतिदृश्यममुष्य पश्यन् मानं जहाति किल रत्नपुराधिराजः ॥ ५ ॥

आयाति मन्थरतयैष कलिङ्गनाथः श्रीगूर्ज्जरक्षितिपतेः प्रतिहारभूमौ ।
उद्दामयामिकमहत्तरहस्तियूथदानद्रवप्रसरपङ्किलपिच्छिलायाम् ॥ ६ ॥

अश्रान्तमेव समरेषु कृतश्रमा ये प्रागेव साम्प्रतममुष्य सभाङ्गणस्थाः ।
तेऽमी त्रिलिङ्गसुभटा नटतां प्रपन्नाः प्रोद्दण्डताण्डवकलां परिदर्शयन्ति ॥ ७ ॥

भक्त्या न लंङ्घयति राघवसेतुसीमां लङ्कापतिं तदपि यस्तनुते सशङ्कम् ।
सोऽप्यस्य पश्य चरणौ शरणं प्रपन्नः कर्णाटकः समुपढौकितहेमकूटः ॥ ८ ॥

मुक्ताचलैरिव पयोधिनिवेशबाधामुर्व्यामवज्रधरभीरु[पृ० १२B]तया चरद्भिः ।
ऐरावतप्रतिबलैरवनीन्द्रमेनं दन्तावलैर्भजति सिंहलभूमिपालः ॥ ९ ॥

वेषं विशेषरुचिरं दधतादरेण हस्तारविन्दसमुदञ्चितचामरेण ।
राजा विराजतितरां परिहृष्यमानो(णो) गोष्ठीषु दक्षिणनृपेण विचक्षणेन ॥१०॥

एतस्य चण्डभुजदण्डपराक्रमेण निश्शेषखण्डितरणाङ्गणशौण्डभावः ।
सर्व्वस्वमेव निजजीवितरक्षणाय दण्डं समर्प्पयति मालवमण्डलेशः ॥११॥

यः पार्थिवः पृथुतरः खलु कुम्भकर्णः कर्णेन वर्णमुचितं सहते तुलायाः ।
सोऽयं करोति महमूदनृपस्य सेवां दण्डे वितीर्णवरभूरिसुवर्णभारः ॥१२॥

यः कामरूप इति देशपतिः प्रसिद्धो न क्षोभ्यते परबलैर्ध्रुवमानसस्थः ।
अस्याग्रतो विलुठति प्रभुशक्तियोगाद् आकृष्ट एव विनिवेदि [पृ० १३ A] तरत्नदण्डः ॥१३॥

एतस्य केलिवनराजिविहारलाभाद् गन्तुं न राजवनमिच्छति मागधेन्द्रः ।
न स्तौति पुष्पमयमण्डपवासयोगाद् भोगाय पुष्पपुरवासमपि प्रकामम् ॥१४॥

यद्देशमेत्य सरितौ परिषष्वजाते जह्नोः सुता च यमुना च तरङ्गदोर्भिः ।
सोऽयं प्रयागपतिरुज्ज्वलशातकुम्भकुम्भैः पयो वहति पेयममुष्य राज्ञः ॥१५॥

यः शूरसेन इति शूरतया प्रसिद्धो देशोऽस्ति तस्य पतिरेप विशेष शूरः ।
क्ष्माचक्रवर्त्तिमुकुटस्य समीपवर्त्ती सेनाधिपत्यमधिगत्य जयत्यरातीन् ॥१६॥

पार्श्वे चरन् हरिचरित्रकथाप्रसङ्गात् कोटिम्भरेर्महमूदक्षितिपालसूनोः ।
कृत्येषु नित्यमधिकृत्य पदं हि राज्ञां विज्ञापनां वितनुते मथुराधिनाथः ॥१७॥

एतस्य सम्प्रति मुदप्फरपातसाहेर्वंशै[पृ० १३B]कभूषणमणेश्चरणेऽवनम्रः ।
ढिल्लीपुरीपरिदृढोऽप्यभिमानगाढां प्रौढिं परित्यजति निर्ज्जितकान्यकुब्जः ॥१८॥

एतत्समाजमणिमण्डितवेदिकायामालोकयन् घनविलेपनमेणनाभेः ।
नेपालमण्डलपतिः शिथिलीकरोति स्वस्याः क्षितेरपि तदाकरताभिमानम् ॥१९॥

इन्द्रोऽसि वीर वरुणोऽसि वसुप्रदोऽसि लोकेश्वरोऽप्यसि पुरारिमुरारिमूर्त्तिः ।
इत्थं हि साहिमहमूदनृपस्य साक्षात् काश्मीरमण्डलपतिस्तनुते प्रशंसाम् ॥२०॥

वीरः स्वयं समिति विद्विषतां निहन्ता प्रख्यातपौरुषमशेषधनुर्द्धरेषु ।
आरोहणे चितविचित्रतुरङ्गमाणां संवाहनाविधिषु सिन्धुपतिं नियुङ्क्ते ॥२१॥

लक्षेण शार्ङ्गधनुषामपि वाजिनां च तेजस्विनां समुपढौकितभागधेयः ।
अस्याग्रतो भवति गूर्ज्जर[पृ० १४ A]पातसाहेरानम्रमौलिरधिपः किल मुद्गलानाम् ॥२२॥

एतस्य साहिमहमूदनृपस्य सत्रं सर्वंसहेश्वरतयाधिकवर्द्धितर्द्धेः ।
स्पर्द्धेत कस्तुलनया मलयाद्धिमाद्रिमस्ताचलादुदयभूमिधरं च यावत् ॥२३॥

सिंहासने महति तिष्ठति चक्रवर्ती यस्मिन् विशिष्टमणिदर्पणदर्शनीये ।
पार्श्वस्थराजपरिषत्प्रतिविम्बिताङ्गी साक्षाद् विभर्त्ति पदमस्य निजोत्तमाङ्गे ॥२४॥

अस्यावनीन्द्रतिलकस्य[1] सभाः कवीनां केषां न चेतसि चमत्कृतिमावहन्ति ।
वक्त्रारविन्दनिवहेषु समुल्लसन्तः स्वच्छन्दमिन्दुरुचयो वचसां विलासाः ॥२५॥

अस्य प्रभोर्वितरणार्ज्जित[2]कर्णकीर्त्तेर्विद्वज्जनाः प्रणयदृष्टिकृतप्रसादाः ।
पट्टाम्वरैश्च मुकुटैश्च समप्रतिष्ठासम्भावनां सदसि भूप [पृ० १४ B] तिभिर्लभन्ते ॥२६॥

रागेण सुस्वरतया प्रगुणेन हा हा हू हूपहासपटुसद्गमकप्रयोगाः ।
गीतानि गायनवराश्चरितैरुदारैर्गायन्ति गुम्फितपदानि महीमघोनः ॥२७॥

अन्योन्यमुष्टिहतिवक्रितपृष्ठदेशाः पादाभिघातपरिघट्टितहृत्कपाटाः ।
खेलन्त्यनर्गलभुजार्गलदुर्निवाराः कौतूहलाय बलिनः पुरतोऽस्य मल्लाः ॥२८॥

भाति प्रसृत्वरतरैः परितो जनौघैर्विभ्राजमानबहुरत्नसमृद्धिमद्भिः ।
क्षोणीसहस्रनयनस्य महान् समाजः पूर्णस्तरङ्गनिवहैरिव वारिराशिः ॥२९॥

स्वच्छन्दमेव निजमन्दिरभूमिकासु यं यं प्रदेशमभिलष्य पदं दधाति ।
सभ्याः प्रतापनिधिमेनमनुव्रजन्तः सर्वत्र तत्र किरणा इव विस्फुरन्ति ॥३०॥

अमृतसमरसाभिर्दृष्टिभिः [पृ० १५ A] प्रीतियोगान्मुहुरपि बहुमानं भावयन् भृत्यवर्गम् ।
विशति मधुरगीतैरेष नृत्योत्सवार्थं रचितसदुपचारं मन्दिरं सुन्दरीभिः ॥३१॥

इति किल महमूदसाहेरभिनववैभववर्णने प्रसक्ता ।
पुनरपि पुरुहूतकौतुकार्थं सरसपदानि सरस्वती व्यतानीत् ॥३२॥

श्रीमान् साहिमुदप्फरस्समजनि श्रीगूर्ज्जरक्ष्मापति-
स्तस्मात् साहिमहम्मदस्समभवत् साहिस्ततोऽहम्मदः ।
जातस्साहिमहम्मदोऽस्य तनुजो गायासदीनाख्यया
ख्यातः श्रीमहमूदसाहिनृपतिर्जीयात् तदीयात्मजः ॥३३ ॥

॥ इति श्रीमहाराजाधिराज-जरबक्सपातसाह-श्रीमहमूदसुरत्राणचरित्रे
राजविनोदे महाकाव्ये सर्वावसरो नाम चतुर्थः सर्गः ॥

श्रीः कल्याणमस्तु लेखक पाठकयोः ॥श्रीः॥ [पृ०१५ B]

---

(१) सभाकवी० इति प्रतौ । (२) वितरणाजित० इति प्र० ।

॥ पञ्चमः सर्गः ॥

इतो मृदङ्गध्वनिना मृगीदृशो मुहुर्वहन्त्योऽभिनयाय विभ्रमम् ।
रणज्झणन्नूपुरसूचितागमा विशन्ति सङ्गीतकरङ्गमण्डपम् ॥१॥

सुगन्धिनानाकुसुमस्रजांभरैः प्रक्लृप्तमुद्दिश्य विलासमण्डपम् ।
समापतन्तः परितो मधुव्रताः सृजन्ति झङ्कारमनोहरा दिशः ॥२॥

समीरणो रङ्गभुवः समुल्लसन् विलेपिता या घनयक्षकर्द्दमैः ।
सभाजनं भावयतीव सौरभैः कृतार्थयिष्यन्निव गन्धवाहताम् ॥३॥

समन्ततोऽपि प्रसृतं नृपालये प्रकृष्टकृष्णागरु[१]धूपसञ्चयम् ।
गवाक्षमार्गैर्नियता मुहुर्बहिर्नभस्वता वासितमम्बरं महत् ॥४॥

तमो नुदत्यो निजभूषणस्फुरन्मणिप्रभाभिः परितः पुरन्ध्रयः ।
नृपस्य नीराजनमङ्गलोत्सवं सृजन्ति सायंतनदीपमालया ॥५॥

उदारशृङ्गारमनोहराकृतिर्विभाति राजा कनकासनस्थितः ।
स्फुरत्सुप[पृ० १६A]र्णोपरि सन्निषेदुषः श्रयन्मुरारेरनुरूपतामिव ॥६॥

समं समन्तात् परिवृत्य वल्लभं विभान्त्यमूश्चन्द्रमिवोडवः स्थिताः ।
विलोचनैरञ्चितविभ्रमैस्स्त्रियः कृतोपहारा विकचोत्पलैरिव ॥७॥

इमाः प्रकृत्येव परं मनोरमाः पुनर्विचित्राभरणैर्विभूषिताः ।
तथा च नृत्याभिनयार्थमुत्सुकाः कथं न रामा रमयन्ति मानसम् ॥८॥

अमुक्तया पाणितलादपि क्षणं रहस्यसख्येव निवद्धरागया ।
कलं क्वणन्त्या वरवीणयाऽन्यया प्रवीणया राजमनो विनोद्यते ॥९॥

जितं हि वादित्रशतेऽपि वेणुना स्वयं निधायाधरपल्लवेऽनया ।
यदेष रागातिशयेन मुग्धया स्वकण्ठमाधुर्यमिवोपशिक्ष्यते ॥१०॥

दिगङ्गन्तरालेशु नरेन्द्रमन्दिराद् विजृम्भते सान्द्रमृदङ्गनिस्वनः ।
अमुं समभ्यस्यति गर्ज्जितच्छलाद् वलाहकस्ताण्डवयन् शिखण्डिनः॥११॥ [पृ० १६B]

कलावतीयं मधुरेण गायति स्वरेण संवासितरागमूर्च्छनम् ।
निजं मनो मञ्जुलकांस्यतालजस्वनैरिवोज्जागरयन्त्यनुक्षणम् ॥१२॥

इयं मुखाम्भोरुहसौरभार्थिनी विलासिनीनां मधुपावलिर्मुहुः ।
मनोरमालप्तिषु गीतिषु श्रुतेः करोति हुंकारभरेण पूरणम् ॥१३॥

---

(१) गुरु इति प्र० ।

अलंङ्कृतं षोडशभिः पदैरियं समग्रसूडक्रमगानपण्डिता ।
प्रबन्धमेलाख्यमखण्डलक्षणं विचक्षणा गायति भूपतेः पुरः ॥१४॥

पदैरुदारैर्विरुदैः स्वरैरपि स्फुटैश्च पाटैरतिहर्षवर्द्धनम् ।
अमुष्य राज्ञः कलकण्ठभाषिणी कुतूहलाद् गायति हर्षवर्द्धनम् ॥१५॥

प्रियेण वृत्तैः स्वयमेव निर्मितैः स्वयं च कण्ठाभरणीकृतैरियम् ।
शुचिस्मिता गायति वीणया समं मनोरमं रागकदम्बकं मुदा ॥१६॥

इयं विशन्ती नवरङ्गमङ्गना स्फुरत्प्रसूनैः परिपूरिताञ्जलिः ।[पृ० १७ A]
प्रियस्य सौन्दर्य्यविनिर्जितात् स्मरात् स्वयं ग्रहीतैरिव भाति मार्गणै:॥१७॥

समुल्लसन्ती करपल्लवश्रिया स्मितेन तन्वी कुसुमानि तन्वती ।
इयं कटाक्षभ्रमरोपशोभिता मनोभुवः कल्पलतेव नृत्यति ॥१८॥

विधाय विश्राम्यति नृत्यमेकिका परानुसन्धानपरा च नृत्यति ।
समानसौन्दर्यविशिष्टयोर्द्वयोर्विविच्यते नैव परापरक्रमः ॥१९॥

समानलावण्यवयोविभूषणाः प्रतन्वते लास्यविलासमङ्गनाः ।
इमाः सुसङ्गीतकलाकुतूहलात् करोति मन्ये बहुरूपविभ्रमम् ॥२०॥

प्रदर्शयन्त्यो वदनैः सुधानिधेः स्फुटं वपुर्व्यूहमुदारकान्तिभिः ।
शयैर्दधत्यश्च कुशेशयश्रियं विवृण्वते भावमपूर्वमङ्गनाः ॥२१॥

यथाङ्गहारैर्हरिणेक्षणाः क्षणान् नवं नवं बिभ्रति विभ्रमोदयम् ।
तथातिदर्प्पादधुना पुरद्विषो जयाय सज्जीभवतीव मन्मथः ॥२२॥[पृ० १७ B]

गतानि लीलाललितानि शिक्षितुं नितम्बिनीनां चरणाब्जसङ्गतैः ।
कलं क्वणद्भिर्मणिहंसकावलिच्छलेन हंसैरभिरम्यते मनः ॥२३॥

समुच्चयैर्भूषणरत्नरोचिषां स्फुटं दधानाः परिवेषमुज्ज्वलम् ।
नतभ्रुवो बिभ्रति नेत्रवाससस्तिरस्करिण्यन्तरिता इव भ्रमीः ॥२४॥

समीरणैः पल्लवलालनोद्गतैः प्रसक्तनृत्यश्रमवारिहारिभिः ।
करोति रङ्गाङ्गणकेलिवाटिका वधूजनानां व्यजनौचितीमिव ॥२५॥

प्रियस्य सङ्गीतरसे मनो मनाक् प्रसक्तमाकर्षति चारुहासिनी ।
इयं चलच्चामरचारुदोर्लता समुल्लसत्काञ्चनकङ्कणक्वणैः ॥२६॥

प्रकृष्टरोमाञ्चसमुच्छ्वसत्तरस्तनद्वयाभोगविगाढबन्धनम् ।
इयं सुनेत्रा प्रियपाणिनार्प्पितं बिभर्ति रत्नावलिचारुकञ्चुकम् ॥२७॥

स्वयं प्रसन्नेन कुचावलङ्कृतौ प्रियेण हारेण नितान्त हा[पृ० १८ A]रिणा ।
अतीव तुङ्गौ पृथुलौ सुमध्यमा सखीजने साक्षिणि का न मन्यते ॥२८॥

करे गृहीतां मणिकङ्कणार्प्पणे प्रियेण तन्वी तनुकम्पमात्मनः ।
मरुच्चलानां चतुरा विनुह्नुते मुहुर्लतानामभिनीय विभ्रमम् ॥२९॥

इतः प्रफुल्लेन नवाम्बुजन्मना सरोजिनी भानुमिवोपतस्थुषी ।
विभाति बाला प्रसृतेन पाणिना प्रसादयन्ती प्रियमूर्मिकाकृते ॥३०॥

इतः कवित्वैः प्रतिभावती प्रभुं नवैर्नवैस्तोषयति प्रतिक्षणम् ।
स्फुटं पठन्ती किल तानि पञ्जरे करोति कीरावलिरस्य कौतुकम् ॥३१॥

जयेतिशब्दं समुदीरयन्त्यमी कलाविदो मङ्गलसूचकं मुहुः ।
नरेन्द्रलक्ष्मीर्निनदेन दन्तिनां तमेव संवर्द्धयतीव सम्मदात् ॥३२॥

यो दत्तवानिह हि भूरि सुवर्णवर्षि-
कर्णाय कुण्डलयुगं जगदेकदीपः ।
सोऽयं प्रसारितकरः किल सुप्रभातं
कुर्वन्नृपस्य पुरतः प्रतिभाति भानुः ॥३३॥ [पृ० १८ B]

इत्यस्य साहिमहमूदनृपस्य गेहे सङ्गीतकेलिषु शतक्रतुमालपन्ती ।
वीणाक्वणैरिव विरञ्चिसुतावचोभिश्चित्ते चमत्कृतिमधत्त समाजभाजाम् ॥३४॥

श्रीमान् साहिमुदफ्फरस्समजनि श्रीगूर्ज्जरक्ष्मापति-
स्तस्मात् साहिमहम्मदस्समभवत् साहिस्ततोऽहम्मदः ।
जातस्साहिमहम्मदोऽस्य तनुजो गायासदीनाख्यया
ख्यातः श्रीमहमूदसाहिनृपतिर्जीयात् तदीयात्मजः ॥३५॥

॥ इति श्रीमहाराजाधिराज-जरबक्सपातसाह-श्रीमहमूदसुरत्राणचरित्रे
राजविनोदे महाकाव्ये सङ्गीतरङ्गप्रसङ्गो नाम पञ्चमः सर्गः ॥

॥ षष्ठः सर्गः ॥

अथ विकस्वरवारिरुहेक्षणा शरदिव स्फुटकाशसितांशुका ।
पुनरवोचत हंसमृदुस्वना सुरपतिं प्रति वागधिदेवता ॥१॥

अयमनर्गलबाहुबलोद्धतः प्रयतते परचक्रजिगी[पृ० १९ A]षया ।
वसुधयापि नृपा धनिनो न किं न विजयेन विना तु यशस्विनः ॥२॥

भजति मन्त्रमशेषविशेषवित् प्रकृतिभिः सुकृती कृतनिश्चयम् ।
अभिमतं सकृदुद्यमिनामपि स्फुरति मन्त्रबले खलु सिद्ध्यति ॥३॥

करगतैव सदा परखण्डने प्रखरतर्क्कमतेरिव वादिनः ।
विजयसम्पदमुष्य सुनिश्चिता समरसंसदि विक्रमशालिनः ॥४॥

भुजबलेन विनिर्ज्जितभूतलं प्रतिबलो न हि कश्चिदमुं प्रति ।
निजचमूरमुनातिगरीयसी परिजनप्रणयेन पुरस्कृता ॥५॥

क्षितिभृतः कटके गणना कृता सुभटकोटिषु मुख्यतया स्थितेः ।
करिषु यूथशतैरथ पङ्क्तिभिर्हयवरेषु रथेषु च मण्डलैः ॥६ ॥

अगणितं वितरत्यवनीपतावविरतं वसु वैश्रवणोपमे ।
हसति गूर्ज्जरवीरवसुन्धरा न नगरीं न विभीषणगोपिताम् ॥७॥[पृ० १९ B]

असिषु निर्मलितेषु शरासनेष्वधिगुणेषु तथा कवचेषु च ।
ध्रुवमभेद्यतरेषु रणैषिणां प्रकटयत नवीनमिवादरम् ॥८॥

स्मरति यन्मनसा तदुपस्थितं सपदि वस्तु पुराकृतसंग्रहम् ।
भवति भूमिपतेरतिवल्लभं किमिह भाग्यवतः खलु दुर्लभम् ॥९॥

नरपतेर्ब्बहुमानपदे स्थिताः प्रकृतयः पुरुषाः समुपस्थिताः ।
निजनिजाधिकृतिष्वधिकादरा अवहिताद् बहुसैन्यसमन्विताः ॥१०॥

क्षितिपतौ विजयाय यियासति प्रसृमरः पटुदुन्दुभिसम्भवः ।
ध्वनिरुदेतितरां परिपूरयन् गिरिदरीर्मुखरीकृतदिङ्मुखः[1] ॥११॥

सकलभूवलयस्य पुरन्दरः प्रबलशस्त्रभृतामतिसुन्दरः ।
विलसदभ्रमुवल्लभबन्धुरं समधिरोहति सम्प्रति सिन्धुरम् ॥१२॥

विदितवीरसहस्रपुरस्सरं जय जयेति [पृ०२०A] गिरः पृथिवीश्वरम् ।
चटुलचारणबन्दिजनेरिताः श्रुतिगताः सुखयन्ति समन्ततः ॥१३॥

---

(१) दिग्मुखः इति प्र० ।

दिशि दिशि द्विषतामतिदुस्सहो बहिरसावुदयन्निजमन्दिरात् ।
अधिकदीप्तिधरा समुदीक्ष्यते दिनकरः शरदम्बुधरादिव ॥१४॥

नरपतेरनुकारितया श्रिया स्फुटतरं वहुरूपगुणाश्रयैः ।
अवनिपैर्मदनैरिव सङ्गतं चलति चारुवलं मकरध्वजैः ॥१५॥

अथ सुमङ्गललम्भितगोपुरो निविशतेऽनतिदूरतरे पुरः ।
उपवनेऽनुगतैर्बहुशोऽभितः पुरजनैः प्रणयादुपशोभितः ॥१६॥

अरुणरागभरस्फुरिताम्बरं प्रततरश्मिसहस्रमवेक्षते ।
इह भुवोऽधिभुवो नवमण्डपं दिनकृतेः प्रतिरूपमिवोदितम् ॥१७॥

सितपटप्रभवैः शरदम्बुदप्रतिभटैः कटकस्य निवेशभूः ।
हिमगिरेरिव सानुभिरुन्न[पृ०.२०A]तैरुपचिता क्व न राजति मण्डपैः ॥१८॥

विजयिनः कटकेऽस्य महीपतेः प्रकटितैर्निशि दीपसहस्रकैः ।
प्रतिहता विजनेषु विजृम्भिता रिपुपुरेषु घना तमसांभराः ॥१९॥

अमृतकुम्भमिवैन्दवमण्डलं क्षितिभुजः सुरराजदिगङ्गना ।
अभिमुखं कुरुते ध्रुवमुच्चकैरुदयपर्वतमौलिसमर्पितम् ॥२०॥

क्रीडाविचित्रनवनाटककौतुकेन निद्रां दृशोः प्रियतमामपि वञ्चयित्वा ।
कं वा न वीरकटके रमयत्युदारा वाराङ्गनेव रजनी शिशिरप्रगल्भा ॥२१॥

प्राच्यां हरित्यरुणसङ्गमपाटलिम्ना व्यक्तेन लक्षितविभातनिशाविभागाः ।
आराधयन्ति महमूदनराधिराजं वैतालिकाः सुललितैर्वचसां विलासैः ॥२२॥

यन्मङ्गलं पुररिपोर्गिरिजाविवाहे लक्ष्म्याः स्वयम्वरविधौ च जनार्दनस्य ।
श्रीपातसाहमहमूदनरेन्द्र नित्यं [पृ०२१ A] लाभात्तदस्तु रणमूर्द्ध्नि जयश्रियस्त ॥२३॥

कान्ता नितान्तरतकेलिभरेण खिन्ना द्रागेव तल्पमिव नोज्झितुमिच्छतीयम् ।
व्योम्नस्तलं नृपविचक्षणदीर्घयामा रात्रिः स्फुरद्विरलतारकपुष्पहारा ॥२४॥

अस्माभिरेतदनघं तव गीयमानमाकर्णयन्निव यशः श्रवणाभिरामम् ।
चन्द्रः कुरङ्गमधुना परिहर्तुमिच्छुर्नातिद्रुतं प्रमितकान्तिरपि प्रयाति ॥२५॥

यावत्कथाभिरनुनीय कथं कथञ्चित् कान्तः प्रियां नयति मन्मथवाणवश्यम् ।
तावच्छ्रुतेः कटु रटत्यनुवेलमुच्चैर्वैरीभवंस्तरुणयोरिव ताम्रचूडः ॥२६॥

प्राचीमुखं भ्रमवशात् परिचुम्ब्य किञ्चिद् रागादिवाम्बरवशात्स्ववलम्बमानः ।
दूरात् प्रसारयति सम्प्रति पद्मिनीनां प्राणाधिपः किल करान् परिरम्भहेतोः ॥२७॥

उत्कण्ठया निशि भृशं विरहं विपह्य तीरान्तरेषु सरसः सरसं रसन्ति । [पृ० २१B]
राजन् परस्परवितीर्णमृणालनालान्येतानि हन्त मिथुनानि रथाङ्गनाम्नाम् ॥२८॥

प्राभातिकेन पवनेन हिमागमेऽपि भूयः प्रबोधितमहाविरहानलार्च्चिः ।
त्वद्वैरिणामविरलैर्जगदेकवीर सिञ्चन्ति लोचनजलैर्हृदयं तरुण्यः ॥२९॥

श्रीमण्डपे तव नवारुणभाविशिष्टमाञ्जिष्ठमाञ्जिमनि मङ्गलगायनीनाम् ।
निःश्वाससौरभगुणेन मुहुर्भ्रमन्तो वीणारवैर्मधुकरा नृप सम्वदन्ते ॥३०॥

दन्तावलेष्वधिकृता युधि योधमुख्यान् ग्रासाय चाटुभिरमून् प्रतिबोधयन्ति ।
धीराः पराभवमपि प्रणयात् सहन्ते मानोज्झितां न नृपसम्पदमाद्रियन्ते ॥३१॥

अन्योन्यमत्सरभृतो नवमन्दुरासु क्षुण्णोदरासु खुरलीखुरलीलयैव ।
चेतो हरन्ति मधुरं नृप हेषमानाः प्राभातिकाय यवसाय हयास्त्वदीयाः ॥३२॥

नादः समुल्लसति [पृ० २२ A] मर्दलझल्लरीणां सेवार्थराजकसमाजनिवेशशंशी ।
राजन् मुखानि घनमङ्गलभूरिभेरीभाङ्कारभाञ्जि ककुभामभितो भवन्ति ॥३३॥

इति मधुरवचोभिर्मागधैस्स्तूयमानः क्षितिपतिशतचूडारत्ननीराजिताङ्घ्रिः ।
दिनकर इव भूयस्तेजसा वर्द्धमानो महमदनृपसूनुः स्वां सभामभ्युपैति ॥३४॥

एवं निगद्य वचसामभिदेवता सा सानन्दमुल्लसितकुन्दसमानहासा ।
एतत्समाजकविराजकुलं कटाक्षैरालक्षितप्रचलषट्पदलक्षणीयैः ॥३५॥

श्रीमान् साहिमुदप्फरस्समजनि श्रीगूर्ज्जरक्ष्मापति-
स्तस्मात् साहिमहम्मदस्समभवत् साहिस्ततोऽहम्मदः ।
जातस्साहिमहम्मदोऽस्य तनुजो गायासदीनाख्यया
ख्यातः श्रीमहमूदसाहिनृपतिर्जीयात् तदीयात्मज : ॥३६॥

॥इति श्रीमहाराजाधिराज-जरबक्सपातसाह-श्रीमहमूदसुरत्राणचरित्रे
राजविनोदे महाकाव्ये विजययात्रोत्सवो नाम षष्ठः सर्गः ॥
[पृ० २२ B]

॥ सप्तमः सर्गः ॥

प्रकामं सुश्रूषौ सति चरितमस्य श्रुतिसुखं
नृपं स्वेनांशेन श्रितवति सुरेन्द्रे प्रभवता ।
दधाना सान्निध्यं सदसि महमूदक्षितिपतेः
कवीनां वाग्गुम्फैर्मुदमुदवहत् सा भगवती ॥१॥

एका सैन्यपरम्परा तव पुरो विन्ध्यं विलङ्घ्यापरा
प्रालेयाद्रितटीरतीत्य झटिति प्राचीं दिशं गाहते ।
वीर श्रीमहमूदसाहनृपते धावन्ति सार्द्धं मृगै-
स्तन्मध्ये परिपन्थिनो निपतिताः स्थातुं न यातुं क्षमाः ॥२॥

दिक्चक्रबन्धपरपत्तिपरम्पराणां पृष्ठानुयातगजवाजिरथव्रजानाम् ।
मध्ये पुरःसरभटैस्तव मृग्यमाणा भ्राम्यन्ति हन्त हरिणैस्सह वैरिणोऽपि ॥३॥

त्रस्यन्ति यान्ति परिवृत्य विलोकयन्ति सङ्घीभवन्ति च विघटय्य दिशो व्रजन्ति ।
मृग्यश्च वीररिपुराजमृगीदृशश्च चेष्टां समां दधति चापभृतः पुरस्ते ॥४॥

पृष्टे भ [पृ० २३ A] वद्भयवशाद् रिपवः स्वनारीराक्रोशिनीः पथि विहाय पलायमानाः ।
वीर त्वदीयकटकेन पुरो निरुद्धास्तास्वेव निस्त्रपतया पुनरापतन्ति ॥५॥

प्राणांस्तृणानि गणयन्ति रणेषु शूरा लोकापवादमिति लाघवदं त्यजन्ति ।
रुष्टे नृप त्वयि परैर्वदनेऽर्प्पितानि प्राणावनात् खलु गुरूणि कृतान्यरीणाम् ॥६॥

विख्यातवीरवरदर्प्पहरप्रचण्डदोर्दण्डकुण्डलितदुर्द्धरचापदण्डः ।
आखण्डलत्वमखिलक्षितिमण्डलस्य सिंहं निहंसि सरुषं पुरुषैकसिंहः ॥७॥

मुक्ताफलैरविरलत्वदसिप्रहारैः कुम्भस्थलात् प्रतिगजस्य समुच्छलद्भिः ।
हृष्टातिपौरुषभरात् तव वीरबाह्वोर्वर्द्धापनं प्रकुरुतेऽभिमुखी जयश्रीः ॥८॥

प्रतिनृपगजसिंहत्रासजाग्रद्भयाणां जनयति हरिणा [पृ० २३ B] नां श्रेणिराश्चर्यमेषा ।
क्षितिगतिमपहाय त्वच्छरैः पार्श्वलग्नैरुपहितनवपक्षे वान्तरिक्षे चरन्ती ॥९॥

हयखुरहतभूमीरेणुसंछिन्नभानौ नभसि धृतपयोदभ्रान्तयोऽमी मयूराः ।
ध्वनिभिरतिगभीरैस्त्वद्यशोदुन्दुभीनां नृपवर तरुखण्डे तन्वते ताण्डवानि ॥१०॥

चलदचलनिभानां व्यूहभाजामिभानां प्रकटयति समन्तात् कुम्भसिन्दूरपूरः ।
अभिनवदिनभर्तुस्त्वत्प्रतापस्य वीर प्रसरदुदयसन्ध्यारागसौभाग्यलक्ष्मीम् ॥११॥

त्वत्सेनातुरगावलीखुरपुटैरुद्धूलिताभिर्ध्रुवं
धूलीभिः स्थलतां गताः पथि भृशं लुप्ता न नद्यः कति ।

वीर श्रीमहमूदसाहनृपते त्वत्कुञ्जराणां पुन-
र्दानोद्रेकलसत्प्रवाहनिवहैः पूर्णा न जाताः कति ॥१२॥

राजन् स्यन्दनमण्डलानि बहुधाऽऽत्र[पृ० २४ A]र्त्तभ्रमं बिभ्रति
क्रूराः संयति कोटिशश्च सुभटाः कुर्वन्ति नक्रौचितीम् ।
कल्लोलश्रियमावहन्ति तुरगा द्वीपोपमां दन्तिनो
मज्जन्ति द्विषतां कुलानि वलिनां त्वत्सैन्यवारांनिधौ ॥१३॥

धावत्तावकवाजिराजिखुरलीक्षुण्णक्ष्मामण्डली
धूलीव्रातनिपातपीतसलिले सद्यः स्थलत्वं गते ।
वीर श्रीमहमूदसाहनृपते त्वत्तोऽधुना तोयधौ
भूयः सेतुपथप्रबन्धचकितो लङ्कापतिः शङ्कते ॥१४॥

पश्यन्तो बहुरूपिणामभिनयं त्वद्वैरिणः स्वेच्छया
वीर श्रीमहमूदसाह सहसा घाटी*भिरावेष्टिताः ।
ऋक्षाकारभृतोऽथ मर्क्कटमुखाः केचिच्च कापालिकाः
योषिद्वेषभृतो नटैर्निजगृहान् निर्यान्ति निर्यन्त्रणम् ॥१५॥

त्यक्ताः शृङ्खलिता द्विपाः परिहृता वाहोत्तमाः संयता
मञ्जूषाः[पृ० २४ B] समुपेक्षिताः समणयः कोशालयैः सार्गलैः ।
पुर्यश्चाभिमुखं प्रकीर्णविपणा नो दीक्षिता एव तैः
सर्व्वस्वार्पणतत्परैस्तव परैः स्वं रक्षितुं जीवितम् ॥१६॥

त्रुट्यद्भिर्मणिमेखलागुणशतैर्हारैश्च कण्ठच्युतैः[1]
विस्रस्तैः[2]रवतंसकैः प्रतिपदं भ्रष्टैः पुनर्नूपुरैः ।
कान्तारेऽपि पथि प्रसाधनविधिर्धावत्तरैरग्रतो
नाथ त्वत्परिपन्थिनां कुलवधूवर्गैः समारभ्यते ॥१७॥

अद्रेः कन्दरमाश्रयन्ति रिपवस्तन्मन्दिरं मर्क्कटा-
स्तें दुःसंस्तरशायिनः परममी दोलासु केलीपराः ।
ते भ्राम्यन्ति वनान्तरेषु विहरन्त्युद्यानमालास्वमी
स्वामिंस्त्वद्भुजविक्रमेण जनितं तद्भाग्यमप्यन्यथा ॥१८॥

आरोहन्ति गिरिं विशन्ति विपिनं भ्राम्यन्ति दिक्प्रान्तरे
पारावारमहो तरन्ति परितो द्वीपान्त[पृ० २५ A]रं यान्ति च ।

---

* घाटी-घाड़ इति लोके ।

(१) कण्ठश्च्युतै इति प्रतौ । (२) विश्रस्तैरिति प्रतौ ।

यत्र त्वद्भयतो व्रजन्ति रिपवो वीर प्रतापः स्फुटं
तत्रैव प्रकटीभवन् हठवशान् मन्येऽग्रतो धावति ॥१९॥

त्वद्विद्वेषिपुरेषु दावहुतभुग्ज्वालावली जृम्भते
लुम्पन्ति क्षितिमम्बरं हयखुरैरुद्धलिता धूलयः ।
हेलाखेलकुतूहलादिव भटाः कुर्व्वन्ति कोलाहलं
स्वक्षतजौघरागसलिलैर्नश्यन्ति ते शात्रवाः ॥२०॥

आविद्धाः परितः शिलीमुखशतै रक्तप्रसूनोद्गिर-
श्शाखाखण्डभृतः परिच्छदभरैर्दूरान्तरे वर्ज्जिताः ।
लक्ष्यन्ते न वनान्तरे त्वदरयो राजेन्द्र सेनाचरै-
स्तुल्याकारतया वसन्तसमये लीनाः पलाशद्रुमैः ॥२१॥

किमपि विरमद्दानोद्रेकाः सरस्स्ववगाहनैः
शिशिरसमयप्रान्ते राजेन्द्र भद्रगजास्तव ।
कमलवनिकास्त्य[पृ० २५ B]क्त्वा सद्यः कटेषु निपातिना-
मिह मधुलिहां झङ्कारौघैर्वहन्ति मदं मुहुः ॥२२॥

अतिबलतया निर्मथ्नन्तो द्विषां युधि यूथपान् विविधनगरीसौधाट्टालप्रपातसमुद्यताः ।
उपवनतरुश्रेणीरुच्चैर्विचूर्णयितुं क्षमास्तव कथमिमे राजन् मत्ता नदन्ति न दन्तिनः ॥२३॥

रिपुजनपदाक्रान्तौ धारां समुत्पतनक्रियां प्रतिगजघटाकुम्भद्वन्द्वप्रहारविधौ पुनः ।
धरणिवलयं जेतुं राजन् परिक्रमणे दिशां कटकसुभटैरध्याप्यन्ते हयास्तव मण्डलीम् ॥२४॥

असमसमरक्रीडावेशान्मुहुर्विजितश्रमाः पवनरयमप्युच्चैरेते निर्वर्त्तितुमुद्धताः ।
नृप तव हयाः क्षोणावातैरुदग्रखुराञ्चलैर्विजयकमलामाशंसन्ति त्वदीयकरे स्थिताम् ॥२५॥

न दक्षिणनृपः क्षणं भजति मेदपाटो मुदं न विन्दति न माद्यति स्वहृदये स ढिल्लीपतिः ।
धराधर तवाधुना समरचण्डिमव्याहतः करोति न च डम्बरं स खलु गौडचूडामणिः ॥२६॥

अखण्डि रणचण्डिमा झटिति मण्डपक्ष्मापतेरलुण्टि पुटभेदनं खलु गरिष्टमाष्टाभिधम् ।
अवन्धि गजबन्धिराडवधि दुर्द्धरो विन्ध्यराडमाथि मथुराधिपो नृप भवद्भटैरुद्भटैः ॥२७॥

वङ्गाः के क इमे त्रिलिङ्गसुभटाः केऽमी महाराष्ट्रजाः
के वा मालव-मेदपाटकुनृपाः कर्णाटकीटाश्च क ।
वीर श्रीमहमूदसाहनृपते त्वज्जैत्रयात्रोत्सवे
निःसाणध्वनिधौङ्कृतैरपि चमत्कुर्युर्दिशामीश्वराः ॥२८॥

सेवन्ते चरणौ शकक्षितिभुजो दत्ते च गौडेश्वरः
कन्यारत्नमखण्डदण्डमपरे कर्ण्णाट-लाटादयः ।

त्यक्त्वा लण्टितदे[पृ० २६ B]शकोशविषयो द्राग् दुर्गमानग्रहं
राजन् जीवितमात्रलाभमधुना काँक्षन्त्यसौ मालवः ॥२९॥

याः शीर्णोपवनेषु दग्धनगरेष्वालोक्य वीचिभ्रमाद्
देशेषु द्विषतां हठेन हरिणा धावन्ति तृष्णालवः ।
न ह्येता मृगतृष्णिका नृप भवत्तीव्रप्रतापानल-
प्लुष्टस्य द्युमणेर्निमज्जनकृते तोयाशयाः सम्भृताः ॥३०॥

भग्नानां समराङ्गणे वलवता वीर त्वया वैरिणां
यद् ग्रामेषु पुरेषु याचकजना देशेषु च स्थापिताः ।
एतत्ते महमूदसाह चरितं लोकोत्तरं सर्व्वतः
कीर्त्तिस्तम्भमिषादुदञ्चितभुजा व्याख्याति पृथ्वी स्वयम् ॥३१॥

असमसमरकेलीसङ्गमायासभाजां क्षितिप तव भटानां भग्ननानारिपूणाम् ।
मलयमरुदिदानीं वन्दनामोदवाही प्रियसुहृदिव [1]मृद्नात्यङ्गमालिङ्ग्य खेदम्॥३२॥[पृ०२७A]

स्फुरति विरहभाजां दुःसहोऽयं वसन्तस्तरुणजनमनङ्गो बाणलक्षीकरोति ।
इति हि परभृतानां वाक्कुहूकारगर्भा त्वरयति नृप पान्थान् प्रेयसीसङ्गमार्थम् ॥३३॥

कनकशिखरवद्भिर्मञ्जरीपुञ्जिताग्रैर्नवकिशलयसङ्गाकृष्टकौशेयशोभैः ।
प्रतिदिशमुपचिन्वन् गूर्ज्जरक्ष्मापलक्ष्मीं रचयति सहकारैस्तोरणानीव चैत्रः ॥३४॥

घनतरमकरन्दैः स्नापिता पल्लवौघैः कलितललितवासाः प्रोल्लसद्दिङ्मुखश्रीः ।
स्फुटकुसुमपरागैः सान्द्रकाश्मीररागैर्नृप नवऋतुलक्ष्म्यालङ्कृता गूर्ज्जरक्ष्मा ॥३५॥

अपि बहुतरदूरादुत्सवं लोचनानां वरणशिखररूढैः केतनैर्वर्द्धयन्ती ।
नृपतुरगरयेण प्रापितासन्नदेशा जनयति मुदमुच्चततोरणा राजधानी ॥३६॥ [पृ०२७ B]

एनां प्रविश्य नगरीं परमर्द्धिपूर्णां द्वारावतीमिव रमारमणः प्रकामम् ।
नानाविधान्यधिवसन् मणिमन्दिराणि राजन् रमस्व तरुणीभिरुदारमूर्त्ते ॥३७॥

सम्भाविता करपरिग्रहणेन सम्यक् सौभाग्यमेतु भवता नृप रत्नगर्भा ।
श्रीपातसाहमहमूद पितेव पुत्रान् प्रेम्णाधिकेन परिपालय भृत्यलोकान् ॥३८॥

एवं विधानि वचनानि कवीश्वराणां कर्णामृतानि कलयन् नृपचक्रवर्त्ती ।
सौवर्णवृष्टिभिरधःकृतकर्णकीर्त्ती राज्यश्रियाभिमतया रमते प्रकामम् ॥३९॥

श्रीसङ्गमेऽपि सुविवेकपुरस्कृतायाः कीर्तिप्रशस्तिकरणादनृणीभवन्त्याः ।
आज्ञावशेन वचसामधिदेवतायाः काव्यं मया विरचितं महमूदसाहेः ॥४०॥

---

(१) मृद्भात्यंग० इति प्र०

प्रयागदासस्य तनूद्भवेन श्रीरामदासेन कृ [पृ० २८ A] ताभियोगः।
व्यधत्त काव्यं महमूदसाहेः सदोदयायोदयराजनाम्ना ॥४१॥

[लोकाः सप्त?] विभान्ति यावदनघा यावच्च सप्तर्षयो
यावद्दीप्यति सप्तसप्तिरमलो यावच्च सप्तार्णवाः।
यावत्सप्तधराधरा पुनरिमाः पुर्यश्च सप्तोत्तमाः
काव्यं श्रीमहमूदसाहनृपतेस्तावज्जनैर्गीयताम् ॥४२॥

श्रीमान् साहिमुदप्फरस्समजनि श्रीगूर्ज्जरक्ष्मापति-
स्तस्मात् साहिमहम्मदस्समभवत् साहिस्ततोऽहम्मदः।
जातस्साहिमहम्मदोऽस्य तनुजो गायासदीनाख्यया
ख्यातः श्रीमहमूदसाहिनृपतिर्जीयात् तदीयात्मजः ॥४३॥

॥ इति श्रीमहाराजाधिराज-जरबक्सपातसाह-श्रीमहमूदसुरत्राणचरित्र
राजविनोदे श्रीमदुदयराजविरचिते महाकाव्ये
विजयलक्ष्मीलाभो नाम सप्तमः सर्गः ॥

वितरति सतां प्रसन्नः सहस्रमयुतं च लक्षमथ कोटिम्।
महमूदसाहनृपतिः पूरयति प्रार्थनामेकः ॥१॥

श्रीरामेणात्मजपठनार्थमिदं पुस्तकमलेखि ॥

[पृ० २८ B]

॥ श्रीः ॥

महमूद (बेगड़ा) का दोहाद का शिलालेख

(वि० सं० १५४५; शक सं० १४१०)

श्री[1]

कास[2]मीरवासिनीं देवीं नत्वा साहि[3]मुदा [फ] रस्यादौ
वंशं जगति विशु [द्धं] – – च[4] पातसाहीनां (नाम्) ॥ १ ॥

आदौ श्री [गू[5]] र्जरेशो नृपकुलतिलक [:] प्राप्त पु[ण्यै[6]] कदेश[:]
श्रीमान् शौर्यादिसारैर्नृपकुलमखिलं यो विजित्याधि [त] स्थौ ।
पश्चात् श्रीदत्तनेस्मिन् प्र [ ]रगुण ⏑ – – रकीर्त्तिर्यशस्वी
मानी भूपालमौलिर्वरमुकुटमणि[7]र्वी विख्यातमू [र्त्तिः] ॥ २ ॥

श्रीमन् वीरोऽभवत् शाहिमुदाफरनृपप्रभुः ।
तत्पुत्रो वीरवि [ख्या]तो महम्मदमहीपतिः ॥ ३ ॥

तस्यान्वये —— ⏑ ⏑ – प्रसूतः प्रतापसंतापितमालवेशः ।
वीरः सदा श्रीमदहम्मदेन्द्रो राजा महीमंडलमंडनाय ॥ ४ ॥

यः सर्वधर्म्मार्थविचारसारसर्वज्ञ [शुद्धो नृप] वंशजातः ।
जित्वा महीं मालवकाधिपस्य जग्राह तद्देश[8]धनं च पश्चात् ॥ ५ ॥

तस्मात्पुनर्भूमिपतिः प्रधानवीर [:] सदा साहमहम्मदो ऽभूत् ।
दाता जगज्जीवनजातकीर्त्ति [र्यस्य प्रभावो] विदितः पृथिव्याम् ॥ ६ ॥

साहश्रीमहमूदवीरनृपतिः श्रीग्यास [दीन] प्रभो-
र्विख्यातः ⏑ ⏑ – [9]उदारचरितो जातोन्वये वीर्यवान् ।
यो राज्यादधि [क] ⏑ – प पदवी – – घदामेन[10] वै
कर्ण्णं विक्रमभूपतिं च जितवान् शास्त्रार्थसारे गुरुम् ॥ ७ ॥

राज्यं प्राप्य निजं प्रस[11]न्न [वद]नो दातातिवी [र्या] न्वितः
पश्चाद (द्) क्षिणदिक्पतिं स्वनगरे सं – ⏑[12] जित्वा रिपुम् ।

---

(१) यह अक्षर अब बहुत हल्कासा दिखाई पड़ता है। इसके पहले सम्भवतः 'स्वस्ति' शब्द होगा। (२) काश्मीर होना चाहिए। (३) शुद्ध शब्द 'शाहि' है। आगे तीसरे श्लोक में शाहि लिखा है। (४) सम्भवतः यहां 'वक्ष्ये' पद है। (५) अब इस अक्षर की 'ऊ' की मात्रा ही दिखाई देती है। (६) पाठ संदिग्ध है। (७) रेफ़ यहां णि पर दिया गया है। (८) 'तद्वश्मधनं च' ऐसा होना चाहिये। (९) 'स्वगुणैर्' (?) (१०) 'दानेन' होना चाहिए। (११) यहां स पर अनुस्वार दिया गया है जो अनावश्यक है। (१२) सम्भवतः 'सङ्ख्ये च' ऐसा पाठ हो।

[तप्तो वै]र्दं (द) मनाधिपस्य सकलं देशं समं भूधरै-
नीत्वा श्रीमहमूदसाहनृपतिश्चक्रे मतिं [रै] ।। ८ ।।

तत्रोत्तुंगनगेन्द्रसंगतभटान् वीक्ष्यादरेण [स्वयं]
युद्धं चाद्भुतविक्रमं [स कृतवान्] भूपः स्वसेनाजनैः ।
जित्वा दुर्गमशेषवैरिसहितं यो जीर्णं संज्ञं ⏑–[1]
कीर्तिस्तंभमिदं चकार नृपतिस्तद्रैवतं पर्वतम् ।। ९ ।।

चंपक – –[2] पश्चात् सं – – वैरिकुद्ध(ल?)कुद्दाल [:] ।
जित्वा पावक [दुर्गं] पित्रा रुद्धं प्रतापतापूं[3] (र्वम्) ।।१०।।

महमूदमहीपालप्रतापेनेव पावकम् ।
प्रविश्य ज्वालितं [सर्वं] वैरिवृंदं पतंगवत् ।।११।।

जीवंतं तत्पतिं ब[द्ध्वा] दुर्गं [नी] त्वा महाबलम् ।
चकार तत्पुरे राज्यं महमूदमहीश्वर [:] ।।१२।।

ज्ञात्वा गुणै [:] कर्म्मभिरप्युदारैरेतं कुलीनं नृपवंशजातम् ।
मुख्यं चकारात्मगृहे महीशः स सेवके [भ्यो]धिकमानदानैः ।।१३।।

पश्चादि [मं] सेवक [मि] ववीरमिमादलं कार्यकरं विदित्वा ।
आ – ⏑ – – ⏑ सदातिशूरं सद्वाक्य – – ⏑ ⏑ देशर[4]क्षाम् ।।१४।।

[पा] मीरवंशे नृपतिप्र [धः] न (नः)– – ⏑ मोभूदतुलप्रतापः ।
स – हव या सं (सां) नागरीतं – सूयते – ⏑ ⏑ चारुकीर्त्तिः ।।१५।।

तस्मात् संवलवनेज – – – मखिल क्षितौ – – –(:)
मा (मी) प्रतापवान् वीर (रो) विख्यात [:] पुण्यकर्मणि ।।१६।।

मह[मू]द महीपालसेवाप्रौढप्रतापवान् ।
दानवीरश्चिरं जीयान्मलिकश्रीईमादलः ।।१७।।

पल्लीदेशाधिकारं च पुण्यं पुण्यमतिस्तदा ।
दुष्टारिहृदये राज्यं[5] दुर्गमेनं चकार वै ।।१८।।

[येनादौ] ⏑ ⏑ – ⏑ धौति [विपुलं] गंगोर्मिकल्लोलवत्
पूर्णं पुण्यजलेन सर्व ⏑ ⏑ – – – ⏑ – – ⏑ – !
कासारं ⏑ दक्षोद ण[6] मनसोल्लासेन निष्पादितं
सोयं वीर इमादलें [द्रनृप] तिर्दुर्गं चकारोत्तमम् ।।१९।।

---

(१) 'संज्ञं पुनः' ऐसा होना संभव है। (२) 'द्रंगं' होगा। (३) इस पद का ठीक ठीक अर्थ नहीं निकलता। पाठ संदिग्ध है। (४) मूलमें 'वेशरक्षां' जैसा मालूम देता है। (५) शल्यं (६) 'कासारद्वयमादरेण' यह पाठ हो सकता है।

अहम्मदपुराँतस्थः कूपो यस्य विराजते ।
जगज्जीवनदानेन यशोराशिमिवोद्वहन् ।।२०।।
य [:] श्रीमन्महमू शाहकृपया श्रीचंपकाख्ये पुरे
[1]--[की] र्तिविवर्द्धनं सुविपुलं तापत्रयोन्मूलनम् ।
सानंदेन चकार मानससमं 'सत्पुष्करं' भूतले
सोयं वीर इमादलेंद्रनृपतिर्दुर्गं चकारोत्तमम् ।।२१।।
वागूलाधिपतिर्यस्य जयदेवो म – ट ⌣ [।]
· · · · · मिर्षैर्निन्ये लूषजीवशिर [;] स्वयम्[2] ।।२२।।
तत्राशेषा [न्रि] पून् हत्वा कृत्वा दिग्विजयोदयम् ।
रायदुर्गं समजयत् योसौ वीर इमादलः ।।२३।।
· · · · (रावल) वेधनेन सकलं तद्वैरिवृन्दं त [था]
· · · · लि – विमुक्त गोलकगणैः संहृत्य चूर्णीकृ [तम्]
दुर्गं पू [र्ण्णं] बली विजित्य सबलं प्रोद्यत्प्रतापेन यो
धर्म्मद्व रमिदं प्रहारसहितं त – ⌣ पा – र्ददौ[3] ।।२४।।
वागू [ल] भूपालबलं प्रह [त्य प्रच] ण्डभूमी श्वरकालकर्त्ता ।
यः पावके पूर्ववि [रु] द्धभर्ता किं वर्ण्यते चास्य जयस्य वार्ता ।।२५।।
दधिपद्रे रुचिरतरं दुर्गं वै दुःसह · · · · ।
श्रीमदिमादलमुलको दान · · · सुंदरश्चक्रे ।।२६।।
श्रीनृपविक्रमार्क्कसमयातीत संवत् १५४५[4] वर्षे शाके १४०१०[5] वर्षे प्रवर्त्तमाने वैशाख शुदि १३ · · · · · · · · · · शुभे दिने मलिक श्रीइमादलमलिकि दुर्ग उद्धरे [श्रीरस्तु] जे गढ़ पोलि नी पारी ते वंतरी · · · · · · · · · तिस · · · · ।

---

(१) 'पुण्यं'
(२) अर्थ स्पष्ट नहीं है । (३) तस्मै कृपाब्धिर्ददौ ।
(४) १५४ और ५ के बीच में एक बिन्दु सा दिखाई देता है । संभवतः पत्थर की खरोंच है ।
(५) १४ और १० के बीच का बिन्दु अनावश्यक है ।

महमूद बेगड़ा के समय का दोहाद का शिलालेख†।

(वि० सं० १५४५; शाके १४१०)

मूल लेख के संपादक

डॉ० एच्० डी० साँकलिया, एम्० ए०, एल्-एल् बी०,
पीएच्० डी० (लन्दन)

यह शिलालेख प्रिंस आफ़ वेल्स म्यूजियम, बम्बई में सुरक्षित है। उक्त म्यूजियम के संरक्षकों के सौजन्य से प्राप्त लेख की छापों एवं मूल शिला से भी देखकर इस लेख को सर्वप्रथम अभी प्रकाशित किया जा रहा है। पुरातत्व विभाग के क्यूरेटर श्री जी० वी० आचार्य व श्री आर० के० आचार्य ने इस लेख के कुछ अंशों को पढ़ने में सहायता की है अतः सम्पादक उनका आभार मानता है। जिस पत्थर पर यह लेख खुदा हुआ है वह ३ फीट ३ इंच लम्बा और १ फुट ७ इंच चौड़ा है। कहते हैं कि यह पत्थर दोहाद कस्बे से प्राप्त किया गया था जो बम्बई प्रेसीडेंन्सी में वड़ोदा से उत्तरपूर्व में ७७ मील पर स्थित है। दोहाद पाँचमहाल जिले के सबडिवीज़न का एक प्रमुख कस्बा है। दो लम्बी दरारों के अतिरिक्त कई जगह से इस पत्थर की चटखें उतरी हुई हैं जिनसे इस लेख को पढ़ने में कठिनाई पड़ती है। कहीं-कहीं इस पर सिन्दूर अथवा और कुछ रंगीन चिकना पदार्थ लगा हुआ है जिससे यह कठिनाई और भी बढ़ जाती है। इस लेख में कुल २२ पंक्तियाँ लिखी हुई हैं; पहली व अन्त की दो पंक्तियों के बहुत से अक्षर बिलकुल घिस गये हैं। प्रत्येक अक्षर प्रायः ½ इंच का है।

यह लेख वैशाख सुदी १३ विक्रम सम्वत् १५४५, शक सम्वत् १४१०, का है (सम्भवतः २१ वीं पंक्ति के पूर्वार्द्ध में हिज़री सम्वत् और वार का नाम भी खुदा हुआ था जो बिलकुल चटख गया है)। गणना से यह दिन वृहस्पतिवार, २४ अप्रैल १४८८ ई० (हिज़री सन् ८९३ जमादि-उल्-अव्वल) आता है।‡ तिथि के विषय में यह बात ध्यान देने योग्य है कि इस लेख पर विक्रम सम्वत् तथा शक सम्वत् दोनों ही खुदे हुए हैं। यह क्रम गुजरात में पाए जाने वाले महमूद के समय के सभी संस्कृत शिलालेखों¶ में

---

† 'एपिग्राफिआ इण्डिका' के जनवरी, सन १९३८ (भाग २४, अंक ४) में प्रकाशित।

‡ इण्डियन एफ़िमरीज़, जिल्द ५, पृ० १७८ (एस. के. पिल्लई)

¶ (बाई हरी) का शिलालेख। इण्डियन एण्टीक्वेरी, जिल्द ४, पृ० ३६८ 'अडालज वाव' शिलालेख 'रिवाइज्ड लिस्ट एन्टीक्वेरियन रिमेन्स वाम्बे प्रेसीडेन्सी' पृ० ३००।

नहीं बरता गया है वरन् उत्तरी भारत के दूसरे लेखों में भी ऐसा ही पाया जाता है। काठियावाड़ में प्राप्त *इसी काल के शिलालेखों† पर केवल विक्रम सम्वत् ही पाया जाता है।‡

लेख की लिपि देवनागरी है और इस विषय पर विशेष प्रकाश डालने की आवश्यकता नहीं है।

शिलालेख की भाषा संस्कृत है और आरम्भ में मङ्गलाचरण व अन्त में २६ वें पद्य के बाद के अंश के अतिरिक्त सम्पूर्ण लेख पद्य में है।

दुर्भाग्य से अन्त की तीन पंक्तियाँ बहुत ज्यादा घिस गई हैं और यह ठीक-ठीक पता लगाना सम्भव नहीं है कि यह लेख महमूद बेगड़ा के राज्यकाल में खुदवाया गया था अथवा उसकी स्वयं की आज्ञा से उसके कार्यों का इतिहास अंकित करने के लिये उत्कीर्ण किया गया था। इन पंक्तियों से जो कुछ आशय निकलता है वह इतना ही है कि यह लेख महमूद बेगडा के मुख्यमन्त्री इमादुल-मुल्क द्वारा दधिपद्र (दोहाद) के दुर्ग का निर्माण कराए जाने के बाद ही खुदवाया गया था। प्रसंगवश इसमें गुजरात के सुलतानों की वंशावली, उनके कार्यों और मुख्यतः महमूद के वीरकृत्यों का भी वर्णन आगया है। यह पहला ही शिलालेख है जिसमें महमूद बेगड़ा और उसके पूर्वजों के कार्यों का अर्थात् उनकी बनवाई हुई इमारतों व उनकी जीती हुई लड़ाइयों का विवरण दिया हुआ है।¶

---

* देखो भाण्डारकर, लिस्ट आफ़ इन्सक्रिप्शन्स आफ़ नार्दन इण्डिया (List of Inscriptions of Northen India,) सं० ७२३ और ११२१; ७३६ और ११२६; ७३७ और ११२७; ७४८ और ११२८; ७५७ और ११२६; ७७३ और ११३०: ८७३ और ११३६; ९०१ और ११३८; ९६७ और ११४६।

† देखो रिवाइज्ड लिस्ट Revised List etc. पृ० २३९–२४६, २४८–४९, २५१, २५४, २५७, २६३।

‡ इससे पता चलता है कि संवत्सरों का प्रयोग करने की जो प्राचीन रूढ़ि काठियावाड़ में १३वीं शताब्दी के अन्त तक पाई जाती थी वह बाद में बन्द हो गई थी।

¶ अब तक के प्रकाशित अन्य शिलालेख ये हैं:—अरबी लेख—रिवाइज्ड लिस्ट, एण्टी क्वेरियन रिमेन्स बाम्बे प्रेसीडेन्सी, पृ० ३०३, ३०६–०७; एक लेख एण्टी० रिपोर्ट A. S. I. १९२७,२८ पृ० १४६ में प्रकाशित हुआ है; कहते हैं कि इसमें गुजरात के उन सुलतानों के नाम दिए हैं जिनका दौहाद कस्बे को पूरा कराने से सम्बन्ध था। हालोल दरवाजा और चाँपानेर से प्राप्त दो लेख 'एपि० इन्डो-मोस्लि०' १९२९-३० पृ० ४ में प्रकाशित हुए हैं।

संस्कृत लेख—अडालज 'रिवाइज्ड लिस्ट' पृ० ३१० बाई हरी का शिलालेख Inscription Rev. List पृ० ३००; इन्डियन एण्टी०, जिल्द ४, पृ० ३६८, जिल्द ४ पृ० २९८।

१५०० ई० तक के सभी लेखो में–चाहे वे मुसलमान शासकों के हों अथवा

यह लेख मङ्गलाचरण से आरम्भ होता है जिसमें काश्मीरवासिनी देवी§ को नमस्कार किया गया है। इसके बाद मुदाफ़र पातशाह का उल्लेख है जो गुजरात के मुजफ्फर प्रथम के अतिरिक्त और कोई नहीं हो सकता।

इसके बाद गुजरात के सुलतानों की वंशावली इस प्रकार दी हुई है:--(१) शाह मुदाफ़र (२) उसका पुत्र महम्मद (३) उसके वंश में उत्पन्न शाह अहमद (४) तत्पुत्र शाह महम्मद (५) उसका वंशज शाह महमूद।

यह वंशावली मुस्लिम इतिहासकारों द्वारा दी हुई (एवं कैम्ब्रिज हिस्ट्री ऑफ इण्डिया* द्वारा स्वीकृत) वंशावली से भिन्न है। इस पर नीचे विचार किया जाता है।

फरिश्ता,† मीराते सिकन्दरी,‡ मीराते अहमदी¶ और अरेबिक हिस्ट्री ऑफ़ गुजरात|| के लेखकों ने सुलतानों की सूची इस प्रकार दी है:-

---

राजपूत राजाओं के, उनके मुसलमान प्रभुशासकों का उल्लेख है। उनमें से प्रस्तुत लेख के समय का निकटवर्ती एक ही लेख राजपूताने की जोधपुर रियासत के अन्तर्गत लाडनू नामक स्थान का मिला है। यह लेख संस्कृत में है और वि० सं० १३७३ का है। प्रसंगवश इसमें शाहवुद्दीन गोरी से अलाउद्दीन खिलजी तक दिल्ली के बादशाहों की वंशावली दी है। देखो जि० १२, पृ० १७-२७।

§ महमूद के समय के दूसरे लेखों से इस देवी को पहचानने में सहायता नहीं मिलती। संभवतः यह ब्राह्मी सरस्वती देवी है क्योंकि गुजरात के एक लेखक चन्द्रप्रभसूरि (१२७८ ई०) ने भी अपने प्रभावक-चरित (सं० हीरानन्द शर्मा, बम्बई. १९०० ई०) के हेमचन्द्र प्रबन्ध खण्ड में 'देवी काश्मीरवासिनी' पद का प्रयोग किया गया है (पद्य ३६–४६)। इसमें यह बताया गया है कि हेमचन्द्र ने काश्मीरवासिनी ब्राह्मी देवी को प्रसन्न किया और 'सिद्धसारस्वत' हो गया। यहां काश्मीर के शारदामन्दिरवाली दुर्गा सरस्वती से भी तात्पर्य हो सकता है। यह मन्दिर १५वीं और १६वीं शताब्दी में भारतवर्ष में खूब प्रसिद्ध था। देखो—स्टॉईन का 'कल्हणस् क्रानिकल आफ काश्मीर,' भा० २, पृ० २७९।

* जिल्द ३, पृ० २९५ और ७११.

† ब्रिग्स द्वारा फारसी से अंग्रेजी अनुवाद–'हिस्ट्री ग्राफ़ दी राइज आफ दी महोमेदन पावर' जिल्द ४, पृ० १-९। यहां पृ० ८-९ पर फरिश्ता ने किसी इतिहासकार का हवाला नहीं दिया है परन्तु लिखा है कि मुजफ्फरशाह ने अपने पुत्र को दिल्ली रवाना होने से पूर्व 'गियास उद्दौला-उद्दीन मोहम्मद शाह' की उपाधि प्रदान की।

‡ फरीदी कृत अनुवाद पृ० ७; इसमें भी लिखा है कि जफ़रखां ने स्वतन्त्र होने से पहले तातारखां को नासिर उद्दीन मुहम्मदशाह की उपाधि देदी थी।

¶ Bird (बर्ड) कृत अनु० पृ० १९५,-१९७, २०१-०२;

|| जफ़र उल्वालि बी मुज़फ्फर वा आली (रॉस) पृ० १, ३, १४, ९०९ (देखो जिल्द ३ परिशिष्ट)

(१) मुजफ्फर शाह (मुजफ्फर प्रथम) (२) अहमद शाह (अहमद) (३) उसका पुत्र मुहम्मदशाह (मुहम्मद), (४) उसका पुत्र कुतुबउद्दीन (कुतुबउद्दीन अहमद शाह), (५) दाउद (दाऊद) और (६) महमूद (महमूद प्रथम), मुहम्मदशाह का द्वितीय पुत्र।

इससे विदित होगा कि इस लेख की वंशावली में क्रमांक (४) व (५) के अर्थात् मुहम्मदशाह के पुत्र कुतुबुद्दीन* और उसके भाई तथा कुतुबुद्दीन के काका दाऊद के नाम नहीं दिए हुए हैं। परन्तु इसमें महम्मद (जिसको मुसलमान इतिहासकार मुहम्मद लिखते हैं) का उल्लेख अवश्य किया गया है। मुहम्मद का असली नाम तातारखाँ था और उसको यह उपाधि, उसके दिल्ली रवाना होने से पहले, उसके पिता जफरखाँ ने प्रदान की थी।† यह घटना उस समय की है जब जफरखाँ दिल्ली के बादशाह की ओर से गुजरात में सूबेदार ही था और वहाँ का स्वतन्त्र शासक नहीं हुआ था। प्रस्तुत शिलालेख में महम्मद का 'महीपति' की स्थिति में वर्णन किया गया है। सम्भवतः उसके लिए इस उपाधि का प्रयोग महम्मद के उपरिवर्णित अल्पकालीन प्रभुत्व का स्मरण कराने के लिए ही किया गया हो। यह बात इस कारण से और भी संगत प्रतीत होती है कि उसे 'महीपति' लिखने के अतिरिक्त इस लेख में उसके द्वारा विजय की हुई किन्हीं लड़ाइयों का उल्लेख नहीं किया गया है।

परन्तु, इन कुतुबुद्दीन और दाऊद के नाम इसी शिलालेख में छोड़ दिये गये हों ऐसी बात नहीं हैं, दूसरे दो अरबी शिलालेखों में भी ये नाम नहीं मिलते हैं। एक लेख तो स्वयं महमूद‡का है और दूसरा बाई हरी की बनवाई बावड़ी¶में प्राप्त हुआ है। महमूद के चांदी के सिक्कों§ और अन्य कथानकों में भी इनका पता नहीं चलता है। इसके अतिरिक्त इन लेखों में भी मुजफ्फरशाह के पुत्र मुहम्मद (तातारखाँ) को मुहम्मदशाह लिखा है जिसका अर्थ यह निकलता है कि वह गुजरात के स्वतन्त्र सुलतानों में से था।

इस वंशावली के सम्बन्ध में दो बातें और ध्यान देने योग्य हैं। (१) यद्यपि अहम्मद (क्र० ३) और महमूद (क्र० ५) क्रमशः महम्मद (क्र० २) और शाह महम्मद (क्र० ४) के पुत्र थे परन्तु जिस प्रकार इन दोनों को स्पष्टतया क्रमशः मुजफ्फर और

---

* देखो—ऊपर बताए हुए इतिहासकारों की टिप्पणियां।

† ब्रिग्स—पृ० ९; फरीदी—पृ० ६; बर्ड—पृ० १७६; फरिश्ता ने लिखा है कि तातारखां ने अपने पिता को क़ैद करके मोहम्मद शाह को उपाधि ग्रहण की; रॉस ने पृ० ६०४ पर लिखा है कि मुहम्मदखां उसका नाम था और तातारखां उसकी उपाधि थी।

‡ एपि० इण्डो-मोस्लिम Ep. Indo-Mos., 1929-30 P. 4.

¶ इण्डियन एण्टि०, भा० ४, पृ० ३६७

§ देखो—प्रिन्स आफ़ वेल्स म्यूज़ियम, बम्बई का सूचिपत्र, गुजरात के सुलतान, पृ० २२

अहम्मद का पुत्र लिखा है उस प्रकार इनके बारे में स्पष्ट न लिखकर "उनके वंशज" इतना ही उल्लेख किया है। (२) कुतुबउद्दीन और दाऊद के नाम इस सूची में नहीं दिये गए हैं। दाऊद का नाम न देने की बात समझ में आ सकती है, क्योंकि उसने बहुत ही थोड़े समय राज्य किया और वह इस वंश का क्रमानुयायी भी नहीं था; परन्तु कुतुबउद्दीन तो महम्मद का ज्येष्ठ पुत्र था और उसने ७ वर्ष* तक राज्य किया। यद्यपि ७ वर्ष का समय कोई लम्बा समय नहीं कहा जा सकता परन्तु उसका राज्यकाल नगण्य भी नहीं माना जा सकता। इसलिए, इन लेखों में इसका नाम न पाये जाने का कोई कारण† समझ में नहीं आता है। ऐसा हो सकता है कि महमूद के समय के सभी अरबी और संस्कृत के लेखों में मुहम्मद (प्रथम) का नाम उल्लिखित करने का और कुतुबउद्दीन व दाऊद का नाम निकाल देने का कोई विशेष कारण रहा हो, जो अब तक ज्ञात नहीं हो सका है। परन्तु, यह कहना तो संगत नहीं होगा कि उन लेखों के लिये जिन साधनों से जानकारी प्राप्त की गई थी वे इतने विशद नहीं थे जितने कि उन इतिहासकारों की जानकारी के स्रोत जिनको हम जानते हैं। फिर, महमूद में और इन दोनों में इतनी अधिक पीढ़ियों का अन्तर भी नहीं है कि उसके घरेलू आलेखों में उनको सहज ही भुलाया जा सके। वरन्, ऐसे आलेखों में तो उनके विषय में बाहरी लोगों की अपेक्षा और भी अधिक जानकारी की सामग्री मौजूद होनी चाहिये। सम्भवतः विभिन्न इतिहासकारों और लेखों से प्राप्त वंशावलियों में भिन्नता होने का यही कारण हो (कि वे इन सुलतानों के घरू आलेखों पर आधारित नहीं हैं)।

इस लेख से हमें जो दूसरी जानकारी प्राप्त होती है वह यह है कि इसमें मुजफ्फर शाह को 'मुदाफर नृप प्रभु' लिखा है। इस 'नृप प्रभु' उपाधि से, दिल्ली के बादशाहों‡ की सेवा करते हुए १३९६ ई० में मुजफ्फर द्वारा गुजरात के स्वतन्त्र राज्य की स्थापना की ओर संकेत किया गया है। इस राज्य की राजधानी पट्टण थी जो प्राचीन काल में गुजरात के चालुक्यों के समय (९६०-१३०० ई०) में अणहिल पट्टण के नाम से प्रसिद्ध थी। दिल्ली के सम्राट् मुहम्मदशाह के सूबेदार की हैसियत से मुजफ्फर द्वारा गुजरात के विद्रोही सूबेदार फरहत-उल्-मुल्क और अन्य पड़ोसी सूबों पर विजय¶ का उल्लेख इस प्रकार किया गया है:—

---

* कैम्ब्रिज हिस्ट्री आफ इण्डिया, भा० ३, पृ० ३०१–३०३; ब्रिग्स–पृ० ३७–४४; फरीदी–पृ० ४१; रॉस–पृ० १४, २००, ४५१।

† कैम्ब्रिज हिस्ट्री आफ़ इण्डिया (जि० ३ पृ० ३०१) में लिखा है कि वह बहुत बीमार होकर मर गया था परन्तु यह हो सकता है कि वह सन्देहात्मक दशा में मर गया हो जैसे उसका पिता मुहम्मह मर गया था (ब्रिग्स–जि० ४ पृ० ३६)

‡ विवरण के लिए देखो 'कैम्ब्रिज़ हिस्ट्री आफ इण्डिया' जि० ३, पृ० २९४-९५

¶ देखो—कै० हि० इ०; ब्रिग्स–जि० ४, पृ० ४-१०; फरीदी–पृ० ५-७; ९-१०; बर्ड–पृ० १७७

"नृपकुलं अखिलं यो विजित्य अधितस्थुः"

मुदाफर के पुत्र महम्मद को केवल 'महीपति' लिखा है । जब तक कोई विशेष वृत्तान्त प्राप्त न हो, इस उपाधि से कोई तात्पर्य नहीं निकलता है । वास्तव में, न तो महम्मंद अपने पिता का उत्तराधिकारी हुआ और न इतिहासकारों ने ही उसके विषय में कुछ अधिक लिखा है । अतः उसके लिये इस साधारण उपाधि का प्रयोग उपयुक्त ही जान पड़ता है ।

महम्मद के बाद अहम्मद हुआ । उसके विषय में लिखा है कि वह 'महीमण्डल' का मण्डन (भूषण) और सब धर्मों, पदार्थों और विचारों को जानने वाला और समझने वाला था । उसने अपने पराक्रम से मालवाधिपति को आक्रान्त ही नहीं किया वरन् उसके देश और धन पर भी अधिकार कर लिया । अहमद की इस प्रशस्ति की सत्यता बहुत कुछ इतिहास स प्रमाणित होती है । उसको 'मही–मण्डल-मण्डन' इसलिये कहा गया है कि वह गुजरात के पहले बड़े सुलतानों में से था, उसने अपने राज्य को दृढ़ बनाया और अहमदाबाद शहर बसाया । यह आश्चर्य की बात है कि इस लेख में उसके अन्य महान् कार्यों के साथ-साथ नगर निर्माण के विषय में कुछ नहीं उल्लेख किया गया है; यद्यपि २० वें पद्य में इस नगर का नाम प्रसंगवश आगया है ।

जैसा कि हमें मुसलमान इतिहासकारों से ज्ञात होता है अहमद मालवा के अधिपति हुशङ्गशाह की आँखों में चुभता था । सन् १४११ व १४१८ ई० में दो बार हुशङ्गशाह ने गुजरात पर आक्रमण* किये परन्तु अहमद ने दोनों ही बार उसे पीछे हटा दिया । इतना ही नहीं, १४१९† ई० में उसने स्वयं मालवा पर चढ़ाई की और हुशङ्ग को हार कर माँडू के गढ़ में शरण लेनी पड़ी । इसके बाद १४२२ ई० में जब हुशङ्गशाह उड़ीसा पर चढ़ाई करने गया हुआ था तो अहमद ने फिर मालवा पर आक्रमण किया परन्तु माण्डू पर अधिकार करने में सफल नहीं हुआ ।‡ अहमदशाह के इन हमलों का कोई विशेष फल न निकला । उसने केवल मालवा प्रान्त को लूटा और बरबाद कर दिया परन्तु उसे अपने राज्य में न मिला सका । प्रस्तुत शिलालेख में उल्लिखित मालवा का ग्रहण करना ऐतिहासिक आधारों पर सिद्ध नहीं होता है ।¶

---

* ब्रिग्स–जि० ४, पृ० १६, १८; फरीदी पृ० १३, १५; कै० हि० इ० जि० ३, पृ० २९६-७

† ब्रिग्स–जि० ४, पृ० २१–२२; फरीदी–पृ० १६–१७

‡ ब्रिग्स–पृ० २२–२५; फरीदी–पृ० १८; कै० हि० इ०, जि० ३, पृ० २९६

¶ 'जग्राह तद्देशधनं च पश्चात्'—यहाँ 'तद्देशधनं' का द्वन्द्व समास करते हैं तो 'तद्देशं च धनं च' ऐसा विग्रह होता है । इससे प्रतीत होता है कि उसका देश और धन ग्रहण कर लिए । यदि उसका विग्रह 'तद्देशस्य धनं जग्राह' इस तरह किया जावे तो इसका अर्थ उसके देश का धन ग्रहण किया अर्थात् उसके देश को लूट लिया ऐसा होता है ।

विवरण के लिए देखिए—ब्रिग्स–जि० ४, पृ० १७, २६, ३०; फरीदी–पृ० १४, १७, १९, २१; वर्ड–पृ० १८८; कै० हि० इ०, जि० ३, पृ० २९६–९९ ।

यह भी विचारणीय है कि इस लेख में अहमद की दूसरी लड़ाइयों*का कोई उल्लेख नहीं है, विशेषतः गिरनार के चूड़ासमा राजा, खानदेश के नासिर और चाँपानेर के राजा का, जिनको उसने १४२२ ई० में अपने आधीन कर लिया था। दक्षिण के बहमनी राजा अलाउद्दीन अहमद के विषय में भी इसमें कोई उल्लेख नहीं है।

अहमद के पुत्र महम्मद के बारे में इस लेख में विशेष हाल नहीं लिखा है और यह ठीक भी है। यद्यपि ऐसा कहते हैं कि ईडर के राजा बीर (बैर), मेवाड़ के राणा कुम्भा और चम्पानेर के राजा गंगादास† पर उसने विजय प्राप्त की थी‡ परन्तु कुछ मुसलमान इतिहासकारों ने उसके विषय में लिखा है कि वह कायर था और जब मालवा के सुलतान महमूद ने उस पर हमला किया तो उसने पीठ दिखा दी थी। उसकी इस कायरता के फलस्वरूप ही कुछ अफ़सरों के बहकाने से उसकी स्त्री ने उसे विष दे दिया था।¶ उसका एक गुण यह था कि वह उदार§ बहुत था और इसीलिये मुसलमान लोग उसे 'करीम' कहते थे।||

महम्मद के बाद तुरन्त ही महमूद से हमारा परिचय होता है। जैसा कि ऊपर लिखा जा चुका है उसके दो पूर्वाधिकारियों के नाम छोड़ दिये गये हैं। महमूद का नाम महमूद बेगड़ा (गुजराती बेगड़ो) अधिक प्रसिद्ध है। प्रस्तुत शिलालेख में उसको वीर योद्धा** लिखा है और आगे चल कर ग्यासदीन का उल्लेख है। यह स्पष्ट नहीं है कि इस उपाधि का प्रयोग महमूद के लिए किया गया है अथवा उसके कुल में उत्पन्न किसी अन्य व्यक्ति के लिए। यदि इसका प्रयोग महमूद के लिए किया गया है तो यह बात कुछ विचित्र सी जान पड़ती है क्योंकि इस उपाधि का अर्थ है (गियास-उद्दीन) धर्म का सहायक, और सिक्कों†† और लेखों‡‡में उसके लिए नासिरउद्दीन वा उद्दुनिया अर्थात् 'धर्म और जगत् का रक्षक' लिखा है। अहमद प्रथम के पुत्र मुहम्मद द्वितीय को उसके सिक्कों में गियासउद्दीन लिखा है।¶¶

---

* देखिए—कैम्ब्रिज हिस्ट्री आफ़ इण्डिया, जि० ३, पृ० २९६–९९

† देखिए टिप्पणी पृ०

‡ कै० हि० इ०, जि० ३, पृ० ३००–०१; ब्रिग्स–जि० ४, पृ० ३५; फरीदी–पृ० २३-२४

¶ ब्रिग्स–जि० ४, पृ० ३६; फरीदी ने यह कृत्य किसी सय्यद का लिखा है, पृ० २६।

§ मीराते सिकन्दरी, पृ २३ पर लिखा है कि उसने 'ज़र बख्श' स्वर्ण-दाता का नाम प्राप्त किया।

|| ब्रिग्स–जि० ४, पृ० ३६; 'करीम अर्थात् दयावान्'। बर्ड–पृ० १९६ "जरबक्स"

** फरिश्ता जि० ४ पृ० ६९–७०

†† सूचीपत्र, गुजरात के सुलतान, पृ० २२

‡‡ एपि इन्डो-मो०, १९२९–३०, पृ० ३-५; रिवाइज्ड लिस्ट, पृ० २५३

¶¶ सूचीपत्र पृ० २२

जिन पंक्तियों में उसके युद्धों का वर्णन किया गया है वे दुर्भाग्य से कई जगह खण्डित हो गई हैं, अतः इन सब घटनाओं का ठीक-ठीक पता लगाना कठिन है। आठवें पद्य में दक्षिण दिक्पति और दम्मण के अधिपति के साथ महमूद के सम्बन्धों का वर्णन है (?) रैवत तक पृथ्वी पर अधिकार (?) का भी जिकर है। (पद्य के) पूर्व भाग में मालवा के महमूद खिलजी द्वारा १४६२ और १४६३ ई० में*'दक्षिण दिक्पति' निजाम शाह पर चढ़ाई करने के अवसर पर महमूद ने जो सहायता की थी उसका उल्लेख किया गया प्रतीत होता है और अपर भाग में दम्मण के पास पारडो के राजा द्वारा १४६४ ई०† में किए गए आत्म-समर्पण की ओर संकेत है।

रैवत अर्थात् जूनागढ़ के गिरनार पर्वत का उल्लेख करने से महमूद द्वारा १४६६ ई० में उस राज्य पर किए पहले हमले से तात्पर्य है। उस समय वहाँ के राजा रावमांडलिक से महमूद ने कर वसूल किया था और उसे राजचिह्न छोड़ने को बाध्य किया था।‡ आगे पद्य में लिखा है कि महमूद ने उस दुर्भेद्य जूना (जीर्ण) गढ़ को विजय किया और उसकी कीर्ति को चिरस्थायी करने के लिये रैवताचल ही विजय स्तम्भ बनाया गया। इससे जूनागढ़ के किले को पूर्णतया जीत कर दिसम्बर १४७० ई०¶ में सोरठ को गुजरात में सम्मिलित कर लेने की ओर लक्ष्य किया गया है। मुसलमान इतिहासकारों का कहना है कि गिरनार के राजा को फिर आत्म-समर्पण करने के लिए दबाया गया तब उसने इस्लाम धर्म को अंगीकार कर लिया और उसको 'खान-ए-जहान्' की उपाधि प्रदान की गई। पहाड़ी की तलहटी में महमूद ने मुस्तफाबाद नामक नगर बसाया और वह नगर भी उसकी राजधानियों में से एक था—साथ ही, वह उसके ठहरने का एक मनचाहा स्थान भी था।§

---

* कै० हि० इ०, जि० ३, पृ० ३०४-०५; ब्रिग्स पृ० ४६-५१; फरीदी पृ० ४० ४२; बर्ड ने पृ० २०६ पर एक ही लड़ाई का हाल १४६१-६२ लिखा है। रॉस पृ० १७

† कै० हि० इ०, जि० ३, पृ० ३०५; बर्ड ने इसका कोई उल्लेख नहीं किया है; ब्रिग्स ने पृ० ५१ पर दम्मण का तो उल्लेख नहीं किया है परन्तु १४६५ ई० में गुजरात से कोंकण की चढ़ाई का वर्णन अवश्य किया है; फरीदी ने पृ० ४२ पर बड़ोदर पर्वत पर चढ़ाई और एक चट्टानी किले की विजय का उल्लेख किया है।; रॉस ने पृ० १८ पर (Bardu) बरडू विजय का हाल लिखा है। यह एक पहाड़ी पर स्थित है जो दम्मण के सामने देखती हुई है।

‡ कै० हि० इ०, जि० ३, पृ० ३०५; ब्रिग्स के मतानुसार पहला हमला १४३९ ई० में हुआ पृ० ५२; फरीदी (पृ० ५३-५४) और बर्ड इस हमले को १४६७ ई० के आस पास हुआ बताते हैं।; रॉस–पृ० १९

¶ कै० हि० इ०, जि० ३, पृ० ३०५-०६; पृ० ५५, पृ० ५७ और पृ० २०९ पर १४७२ लिखा है।

§ कै० हि० इ०, पृ० ३०६-०७; पृ० ५६, ५७, २०९, २०, २५, २६ क्रमशः

पद्य संख्या १०–१२ में बताया गया है कि महमूद ने चम्पक (पद्र ?) अर्थात् वर्तमान (चाँपानेर) को ले लिया, पावक* (पावागढ़) को जीत कर वहाँ के शासक को जीवित पकड़ लिया और उस नगर पर राज्य करने लगा। यहाँ चम्पानेर और इसके किले पावागढ़ पर अन्तिम विजय के सम्बन्ध में मुख्य मुख्य घटनाओं का पता चलता है। मालवा और गुजरात के बीच में चाँपानेर एक 'राजनैतिक स्थिति' का राज्य था। यहाँ के शासक चौहान शाखा के राजपूत थे और गुजरात के पास यही एकमात्र हिन्दू राज्य था। इसलिए जब कभी मालवा के शासक को गुजरात पर आक्रमण करना होता तो वह पहले चाँपानेर के राजा को बहकाता था अथवा यदि उसी को कोई आपत्ति होती तो वह स्वयं गुजरात प्रदेश में लूट मार करके वहाँ के सुलतानों को तंग किया करता था। इस प्रकार, इस राजा और गुजरात के सुलतानों में प्रायः छुटपुट की लड़ाइयाँ और कभी-कभी बड़ी लड़ाइयाँ होतीं ही रहती थीं परन्तु महमूद से पहले कोई भी सुलतान पावागढ़ को जीत कर वहाँ के राजा को काबू में नहीं कर सका था।

उस समय सम्भवतः जयसिंह चांपानेर† का राजा था और महमूद उसके विद्रोह-पूर्ण कार्यों को अच्छी तरह जानता था परन्तु बहुत समय तक उसके राज्य पर आक्रमण

* जयसिंह का वि० स० १५२५ का एक शिलालेख; इण्डियन एण्टीक्वेरी, जि० ६, पृ० २; रासमाला. जि० १. पृ० ३५७ (रॉलिन्सन); बाम्बे गजेटियर, जि० ३, पृ० ३०४; ब्रिग्स, जि० ४, पृ० ६६। आजकल इनके प्रतिनिधि छोटा उदयपुर और देवगढ़ बारिया के राजा हैं।

† वि सं० १५२५ के लेखानुसार जयसिंह उस समय पावक दुर्ग पर राज्य करता था और शायद महमूद के हमले तक भी वही राज्य कर रहा था। प्रस्तुत शिलालेख के २१ वें पद्य में जिस जयदेव का नाम आया है वह वास्तव में जयसिंह ही है क्योंकि 'तवकाते अकबरी' (ब्रिग्स् द्वारा संपादित. पृ० २१२) और 'मीराते सिकन्दरी' (फरीदी पृ० ५६) में भी लिखा है कि चाँपानेर के राजा 'जयसिंह' को महमूद ने हराया था। इन नामों में बहुत समानता है। इसके अतिरिक्त लेख में दिए हुए उसके पूर्वजों के नाम मुसलमान इतिहासकारों द्वारा दिए हुए नामों से मिलते हैं। यथा—

जयसिंह के १५२५ वि० स० का लेख	मुसलमान इतिहासकार
(१) वीर धवल	(१) वीरसिंह (तवकाते अकबरी) यह सम्भवतः अहमदशाह का समकालीन था।
(२) त्र्यम्बक भूप	(२) त्रिम्बक दास (मीराते सिकन्दरी पृ० १४-१७) यह भी अहमदशाह का समकालीन था।
(३) गंगराजेश्वर	(३) गंगादास (मीराते सिकन्दरी पृ० २४ व ३०) यह कुतुबुद्दीन का समकालीन था

करने का कोई अवसर नहीं मिला । निदान, १४८२ ई० में जब चांपानेर के एक पताई* द्वारा पड़ौसी प्रदेश का सूबेदार मलिक सूद मारा गया तो उसे मौका मिल गया । उसके इस कार्य से नाराज़ होकर महमूद ने चांपानेर पर चढ़ाई की और उस पर अधिकार करके वहाँ एक मस्जिद बनवाई । पताई ने पावागढ़ में शरण ली और महमूद ने उस किले को घेर लिया । यह घेरा २१ महीनों तक चला और अन्त में चालाकी से किले पर हमला बोल दिया गया । हताश होकर राजपूतों ने (जो अब बहुत थोड़े रह गये थे) स्त्रियों को जीवित जला कर जौहर पूर्ण किया और मरणपर्यन्त मुसलमानों से अन्तिम युद्ध करने के लिये मैदान में आ गए । (इसका उल्लेख शिलालेख में किया गया मालूम होता है) कहते हैं कि और सब राजपूत मारे गये परन्तु राजा पताई और उसका एक मन्त्री डूंगरशी जीवित पकड़े गए । महमूद उनके साहस और वीरतापूर्ण युद्ध करने पर बहुत प्रसन्न हुआ और जब उनके घाव ठीक हो गए तो उन्हें इसलाम धर्म अंगीकार करने के लिये कहा । जब वे इन्कार हो गए तो उन्हें कैद कर दिया गया और फिर सोचने के लिए समय दिया गया । जब उन्होंने फिर सुलतान के प्रस्ताव को अस्वीकार कर दिया और मुसलमान न होने का दृढ़ निश्चय प्रकट किया तो पाँच* महीने बाद उनको फाँसी दे दी गई । इसके बाद महमूद ने महमूदाबाद नगर बसाया और इसके चारों तरफ़ एक किला बनाया जो जहाँपनाह कहलाया ।

१३-१४ पद्यों का तात्पर्य यह है कि इस नए जीते हुए प्रदेश पर शासन करने के लिए इमादल को नियुक्त किया गया ।

आगे के कुछ पद्यों में मलिक इमादल द्वारा पल्लिदेश की विजय और वहाँ पर एक गढ़ी निर्माण कराने का वर्णन है । इमादल की आज्ञा से बने हुए इसी किले व वहीं पर खुदवाए हुए दो तालाबों का उल्लेख १९ वें पद्य में किया गया प्रतीत होता है । जैसा कि आगे बताया गया है, यह पल्लिदेश गोधरा जिले का ही कुछ भाग था न कि राजपूताने का वह जिला जो इस नाम से प्रसिद्ध है ।

पद्य संख्या २० में एक कुएं का वर्णन है जो, स्पष्ट है कि, इमादल द्वारा अहम्मदपुर में खुदवाया गया था । यहाँ अहम्मदपुर से अहमदाबाद का तात्पर्य है न कि अहमदनगर का ।

---

* दूसरे इतिहासकारों (जैसे फरिश्ता, ब्रिग्स पृ० ६६) ने उसे 'बेनीराय' लिखा है; फरीदी (पृ० ६५-६७) ने रावल पताई, बर्ड (पृ० २१२) ने 'रावल तुप्पई, और बेले ने 'लोकल महोमेडन डाइनेस्टीज़ गुजरात' (१८८६, पृ० २११) में 'राय पताई' लिखा है । इससे विदित होता है कि दूसरे 'चाहमान' अथवा 'चौहान' वंश के राजाओं की तरह चाँपानेर के राजा भी 'राय' कहलाते थे । वाटसन (इन्डि० एण्टि०, जि० ६, पृ० २) का यह अनुमान ठीक है कि 'पताई' पावापति का संक्षिप्त रूप है ।

* कै० हि० इ०, जि० ३, पृ० ३०९-१०; फरीदी, पृ० ६६-६७ फ़रिश्ता, जि० ४, पृ० ६६-७०; रॉस, पृ० २७-३१

इक्कीसवें पद्य में फिर लिखा है कि इमादल ने महमूदशाह की आज्ञा से [चम्पक पुर (चांपानेर ?)] में एक सुदृढ़ दुर्ग और बावड़ी बनवाई। यहाँ दुर्ग से तात्पर्य चांपानेर के चारों ओर की उस बाहरी दीवार और विशेष परकोटे से है जिसको बनवाने के लिए महमूद ने आज्ञा दी थी।*

पद्य सं० २२–२५ में बागूलाधिपति का वर्णन है जिसका नाम जयदेव था (पद्य २२)। इमादल ने उसकी सेना को पूर्णतः पराजित कर दिया था। तेईसवें पद्य में रायदुर्ग विजय का उल्लेख है। यह राय (राजा) का दुर्ग सम्भवतः इसी (जयदेव) राजा का था। चौबीसवें पद्य में फिर किसी किले पर विजय प्राप्त करने का वर्णन है। यहाँ पर यह स्पष्ट नहीं है कि ये सब पद्य पावागढ़ के राजा ही के विषय में हैं जिसका नाम जयदेव था और जिसको पावागढ़ के शिलालेख का जयसिंहदेव बताया जाता है अथवा बागूलाधिपति जयदेव के विषय में जो पावागढ़ के राजा से भिन्न व्यक्ति था। पूर्व पक्ष को मान लेने के लिए पद्य २३ में प्रयुक्त 'दिग्विजय' शब्द ही साधक है। सम्भव है पावागढ़ की विजय को ही 'दिग्विजय' कहा गया हो। क्योंकि इसे अब तक कोई भी गुजरात का सुलतान पूर्ण नहीं कर सका था। फिर, यही एक ऐसा हिन्दू राज्य था जो अब तक स्वतन्त्र बना हुआ था। इस दलील में तो कोई सार नहीं है कि चम्पकपुर विजय का उल्लेख एक ही बार किया गया है और फिर नहीं किया गया क्योंकि २५ वें पद्य में फिर 'पावक' का उल्लेख मौजूद है। यह प्रश्न तब तक ठीक-ठीक हल नहीं हो सकता जबतक कि बागूला का पता न लगा लिया जावे। शायद यह उस भू भाग का दूसरा नाम हो जिस पर चांपानेर का राजा राज्य करता था। सम्भव है, पासही के प्रदेश बागड़ से भिन्न नाम रखने के लिये ही ऐसा किया गया हो अन्यथा यह 'बागलान' हो जो गुजरात और दक्षिण† के बीच में एक छोटी-सी राजपूत रियासत थी। मुसलमान लेखकों द्वारा बागूला का कहीं उल्लेख नहीं किया गया है।

छब्बीसवें पद्य में, जो ठीक ठीक नहीं पढ़ा जा सका है, दधिपद्र (आधुनिक दोहाद) के सुन्दर किले का उल्लेख है। यह किला इमादल मुल्क द्वारा शक सम्वत् १४१० व विक्रम

---

* बाम्बे गेजे०, जि० १, भा० १, पृ० २४७; बर्ड पृ० २१२; ब्रेले (तबकाते अकबरी, पृ० २१०)। यह विचारणीय है कि यद्यपि 'मीराते अहमदी' का लेखक 'मीराते सिकन्दरी' के आधार पर ही चलता है परन्तु 'सिकन्दरी' में इसका कोई उल्लेख नहीं है। कैं० हि० इ०, जि० ३, पृ० ६१२और pt. 25; Beley (बेले) ने पृ० २१२ पर एक नोट में लिखा है कि 'यह ऊपरवाला 'राजप्रासाद' मालूम होता है। स्पष्ट ही दिखाई पड़ता है कि ऊपर के किले के अवशेषों की बनावट मुसलमानी ढंग की है। यह महमूद बेगड़ा द्वारा बनवाया हुआ बताया जाता है जिसने इसका नाम 'मान महेश' रक्खा था। देखिए 'बॉम्बे गजेटियर' जि० ३, पृ० १९०

† यह दक्षिण सम्भवतः पल्लिदेश (वर्तमान गोधरा तालुका) के बहुत समीप है।

सम्वत् १५४५ में बनवाया गया था । इक्कीसवीं पंक्ति में इमादल मलिक द्वारा किसी खास दिन जीर्णोद्धार कराए जाने का उल्लेख है । यह तिथि और दिन अब नहीं पढ़े जा जा सके हैं ।

इस (२६ वें) पद्य में हमें एक नई ही सूचना मिलती है । किसी भी मुसलमान इतिहासकार ने, दधिपद्र (दोहाद) के दुर्ग के निर्माण अथवा जीर्णोद्धार का श्रेय महमूद अथवा उसके साथियों को जिनके कार्यों का विस्तृत वर्णन मीराते-सिकन्दरी* में मिलता है, नहीं दिया है ।

इस शिलालेख में महमूद की १४६० ई० (जब यह उत्कीर्ण हुआ था) तक की सभी महत्वपूर्ण विजयों का उल्लेख है परन्तु इसमें सिन्ध, जगत और द्वारां (द्वारका) के हमलों को छोड़ दिया है जो क्रमशः १४७२ और १४७३ ई० में हुए थे ।†

लेख की ११, १३, १५–१७, २० और २१ वीं पंक्तियोंमें क्रमशः (१) इमादल (२) इमादल मलिक (३) 'वीर' इमादल, (४) इमादुल मुल्क और (५) इमादुल मलिक नामक व्यक्ति के कार्यों का उल्लेख है ।

पहली (११वी) पंक्ति का सन्दर्भ स्पष्ट नहीं है । (इससे) ऐसा प्रतीत होता है कि उसे(इमादल को)'देश रक्षा', (सम्भवतः नये जीते हुए चांपानेर राज्य की रक्षा)के लिए नियुक्त किया गया था । दूसरी (१३ वीं) पंक्ति के अनुसार मलिक इमादल ने पल्लिदेश को जीत कर वहाँ एक किला बनवाया था । तीसरे, उसने चम्पकपुर में एक किला बनाया था । और चौथे, इमादुल मुल्क ने दधिपद्र दुर्ग के सम्बन्ध में एक दान किया और अन्त में मलिक इमादल ने अपने अधीनस्थ उसी दुर्ग का (?) जीर्णोद्धार कराया (मलिकि ?)

प्रसंग देखने से ये सब कार्य एक ही व्यक्ति इमादुल मुल्क द्वारा सम्पन्न हुए जान पड़ते हैं । प्रस्तुत शिलालेख में इन कार्यों का वर्णन 'देश रक्षा' पर नियुक्ति से लेकर शक सम्वत् १४१० में दधिपद्र दुर्ग के जीर्णोद्धार तक तिथि क्रमानुसार लिखा गया है ।

यह इमादल मुलक और इमादुलमुल्क‡एक ही हो सकता है जो कि प्रधान मन्त्री के समकक्ष ही एक पद होता था । महमूद के समय में इस तरह के तीन¶ इमादुल-मुल्क हुए (१) इमादुल मुल्क शा' बान, (२) इमादुल मुल्क हाजी सुलतानी और (३) उसका पुत्र बूद । पहले इमादुलमुल्क ने महमूद की उस षड्यन्त्र के विरुद्ध सहायता की जो उसके तख्त पर बैठते समय हुआ था । बूद वह व्यक्ति था जिसकी सहायता से महमूद ने चाँपानेर आदि स्थानों पर विजय प्राप्त की और दधिपद्र (दोहाद) का किला बनवाया

---

* देखिये—फरीदी पृ० ७८-८८; बेले पृ० २३८ इतिहासकारों ने इमादुल-मुल्क मलिक ग्राईन का नाम लिखा है जिसने आईनपुरा बसाया । यह अहमदाबाद का बहुत सुन्दर कस्बा है । परन्तु, दधिपद्र और दोहाद एक है अतः इस सूचना से विशेष काम नहीं चलता है ।

† कै० हि० इ०, जि० २, पृ० ३०६-०७

‡ प्रिन्स ऑफ़ वेल्स म्यूजियम के श्री ज्ञानी के मतानुसार ।

¶ कै० हि० इ०, जि० ३, पृ० ३०४ व ३०६

तथा उसका जीर्णोद्धार कराया क्योंकि उसका पिता हाजी सुलतानी चाँपानेर की चढ़ाई* के पहले ही मर चुका था ।

इस शिलालेख में अहम्मदपुर, चम्पक (पद्र), चम्पकपुर, दधिपद्र नामक स्थानों, गूर्जर, मालवक, दम्मण और बागूला के अधिपतियों; पावक और जोर्ण (?) दुर्गों तथा रैवतक पर्वत के नाम आये हैं ।

जिस प्रसंग में अहम्मदपुर का नाम आया है वह स्पष्ट नहीं है । अधिक सम्भव यही है कि इससे अहमदाबाद ही का तात्पर्य है जिसको अहमदशाह ने प्राचीन नगर आशावाल†के स्थान पर बसाया था । यहाँ पर उसी के बसाये हुए अहमदनगर‡का प्रसंग इसलिये ठीक नहीं बैठता कि महमूद द्वारा वहाँ पर बनवाई हुई किसी भी इमारत का उल्लेख नहीं मिलता है; जब कि अहमदाबाद में उसने चाँपानेर विजय करने के बाद ही बहुत-सी शानदार इमारतें,¶ नगर के चारों तरफ एक दीवार व बहुत-सी बुर्जें बनवाई थीं ।

चम्पक (पद्र) अथवा चम्पकपुर ही आधुनिक चाँपानेर है जिसके प्राचीन गौरव का इतिहासकारों ने§ बखान किया है । महमूद की बनवाई हुई कितनी ही इमारतों के खण्डहर अब भी चाँपानेर में मौजूद हैं । इनमें से गढ़ (राज प्रासाद) का परकोटा, बुर्जें, दरवाजे, राहदारी के थाने, मस्जिदें और छतरियाँ मुख्य हैं । सबसे बढ़ कर जामा मस्जिद है।||

दधिपद्र और दोहाद एक ही हैं । इसका शब्दार्थ है 'दधि पर बसा हुआ पद्र (गाँव)। दधि से तात्पर्य हैं दधिमती नदी जिसके किनारे आजकल दोहाद** बसा हुआ है ।

---

* कैं० हि० इ०, जि० ३, पृ० ३०९

† कैं० हि० इ०, जि० ३, पृ० ३००

‡ बर्ड, पृ० १९०

¶ कैं० हि० इ०, जि० ३, पृ० ६१२; जि० ४, पृ० ७०

§ आईन-ए-अकबरी (अबुल फज़ल) जि० २, पृ० २४१-२४२

|| इस मसजिद और दूसरी इमारतों के लिए देखिए—आर्कियालाजिकल सर्वे, वेस्टर्न इण्डिया, भा० ६, पृ० ४१ (Arch. Surey West India, Vol. VI, P. 41 and Pts, LVI, LVI II,LXI, and XIV; and C. H I. Vol. III, 612-13 and Pt. XXV और कैं० हि० इ०, भा ३, पृ० ६१२-१३

** पौराणिक आधार पर इसका नाम दध्येश्वर महादेव के कारण दधिपुर का नगर था । दध्येश्वर महादेव दधिमती नदी पर स्थित है । नदी का नाम दधिमती इसलिए पड़ा कि दधीचि ऋषि यहां पर रहते थे । इन आधारों पर दधिपद्र नाम ही अधिक संगत जान पड़ता है । दधिपुर नगर तो बाद में शिव की पुरातनता बताने के लिए नाम रख लिया जान पड़ता है ।

[इस गाँव का स्थानिक उच्चारण 'देवद' या 'दहिवद' है. जो ठीक 'दधिपद्र' का अपभ्रंश है । मुसलमानों ने अपने जिह्वा-वैक्लव्य के कारण इसको 'दाहोद' या दोहाद कह कर बोलना शुरू किया और उसी तरह लिखना प्रारंभ किया और फिर जिसका अनुकरण इंग्रेजों ने किया—जिन विजय ।]

दोहाद से प्राप्त हुए जयसिंह और कुमारपाल के समय के शिलालेखों* में भी दधिपद्र शब्द का प्रयोग मिलता है।

मुसलमान इतिहासकार दोहाद में दुर्ग निर्माण के जिस प्रश्न को पूर्णतया हल नहीं कर सके थे वह प्रस्तुत शिलालेख से हो जाता है। उदाहरणार्थ, मीराते अहमदी के लेखक ने एक जगह † लिखा है कि दोहाद की व्यापारी मण्डी को पहाड़ियों में अहमदशाह ने एक क़िला बनवाया, दूसरी जगह ‡ इसके बनवाने का श्रेय मुजफ्फर (द्वितीय) को दिया गया है। परन्तु, मीरात-ए-सिकन्दरी के कर्त्ता का अभिप्राय है कि धमोद और दोहाद एक ही स्थान के नाम हैं और दोहाद का किला अहमद (प्रथम)* ने बनवाया तथा मुजफ्फर ने मालवा जाते हुए १५१४ † ई० में इसका जीर्णोद्धार कराया।

हमारे शिलालेख के प्रसंग से ज्ञात होता है कि दधिपद्र में किला तो पहले ही मौजूद ‡ था परन्तु वह टूटी-फूटी दशा में था। इसका जीर्णोद्धार ¶ महमूद (प्रथम) के समय में मलिक इमादल ने कराया। सम्भवतः यह किला अहमद (प्रथम) का ही बनवाया हुआ था, जैसा कि ऊपर बताया गया है।

हम ऊपर लिख चुके हैं कि बागूला या तो फरिश्ता§ द्वारा उल्लिखित 'बगलान' है अथवा अबुल फजल|| व अन्य ग्रन्थ कर्ताओं के मतानुसार "बागलान" है। फरिश्ता का कहना है कि यह 'सूरत' के पास का प्रदेश है; दूसरे लोगों का मत है कि यह सूरत और नन्दरबार के बीच का पहाड़ी और घनी आबादी वाला प्रदेश था। आजकल के नासिक जिले** का एक भाग जो बागलान कहलाता है वह इस वर्णन से मिलता है। मुसलमान इतिहासकारों के मतानुसार इस स्थान के शासक राष्ट्रकूट वंश के थे। ये लोग और कन्नौज †† के राठौड़ एक ही थे। इन लोगों की वंशपरम्परागत उपाधि 'बहरजी' थी जो

* इण्डियन एण्टिक्वेरी, ज़ि० १०, पृ० १५९

† बर्ड, पृ० १९०

‡ बर्ड, पृ० २२२

* 'दोहाद का एक थान का कोट खिचवाया जो पहाड़ियों के बीच में था'। फ़रीदी, पृ० १७

† फरीदी, पृ० ९६

‡ दधिपद्रे रुचिरतरं दुर्ग्गं वै—पं० १९

¶ उद्धरेत् प० २१

§ ब्रिग्स, ज़ि० ४, पृ० १९ व ३०

|| आईन ए अकबरी (ग्लैडविन), जि० २, पृ० ७३। इस का उल्लेख सर्वप्रथम, Bombay Gaz. Vol. XVI, p. 188; Vol. VII, p. 65 and 189 में किया गया है।

** Bombay Gaz. Vol. XVI, p. 399.

†† बर्ड द्वारा उल्लिखित 'मोआसिरुल उमरा' (उमरावों का इतिहास) पृ० १२२-इसका यह कथन विश्वसनीय नहीं है कि 'जमीदार के पास......देश चौदह सौ वर्ष से कब्जे में था।'

शायद मसूदी* के मतानुसार कन्नौज के राज्यवंश की उपाधि 'बड़राह' से मिलती है। इन लोगों का कहना है कि इस प्रदेश में सात दुर्ग थे जिनमें से मुल्हेर और सालेर के किले असाधारणतया दृढ़† थे।

वहुत पहले ही से वागलान दक्षिण और गुजरात के समुद्री किनारे पर बीच का स्थान रहा है। तेरहवीं शताब्दी के अन्त में गुजरात के अन्तिम हिन्दू शासक कर्ण ने यहीं पर शरण ली थी। इसके वाद भी यह स्थान गुजरात के और दक्षिण के सुलतानों के बीच लड़ाई का कारण रहा है। कभी इस पर एक का अधिकार होता था तो कभी दूसरे का, और कभी कभी यह दोनों ही के अधिकार से निकल कर स्वतन्त्र हो जाता था। प्रस्तुत शिलालेख में भी गुजरात के सुलतानों की किसी ऐसी ही विजय से अभिप्राय है जिसका मुसलमान इतिहासकारों ने उल्लेख नहीं किया है। यह विजय उन्होंने दौलतावाद के सूबेदार मलिक वागी और मलिक अशरफ बन्धुओं की १४८७ ई० की जीत से पहले प्राप्त की होगी।

पल्लीदेश के विषय में प्रसङ्ग स्पष्ट नहीं है परन्तु इतना अवश्य विदित होता है कि इस नाम के देश में इमादल ने एक किला वनवाया था। आजकल के गोधरा तालुका‡ में एक स्थान है जो पाली कहलाता है। ऐसा प्रतीत होता है कि इस प्रदेश के प्राचीन नाम पल्लीदेश के आधार पर ही इस स्थान का यह नाम चला आ रहा हो। शिलालेख में वर्णित पल्लीदेश को राजपूताने¶ का प्रसिद्ध जिला पाली मानने के लिए प्रसङ्ग की संगति ठीक नहीं बैठती है क्योंकि चाँपानेर विजय करते समय महमूद ने उसी भूखण्ड पर अधिकार किया होगा जो आजकल गोधरा ताल्लुका के अन्तर्गत है और जो उस समय पल्लीदेश के नाम से प्रसिद्ध था। राजपूताने में महमूद ने कोई विजय प्राप्त नहीं की। हाँ जूलवाडा और आबूगढ़§ के राजाओं से कर वसूल करने के लिये मारवाड़ के साँचोर और जालोर जिलों पर आक्रमण करने का उसने मनसूबा अवश्य किया था। इस हमले का कार्य इमादु-

---

* जैसा कि 'वाम्बे गजेटियर' भा० १६, पृ० १८४ नोट ८ में लिखा है।

† इनमें से वहुत से अब भी मौजूद हैं। (वाम्बे गजेटियर, भा० १६, पृ० ४००) वहुत सी पहाड़ियों पर सीधी चट्टानें खड़ी हैं और वहुत सी पहाड़ियों पर परकोटे खिंचे हुए हैं। इनमें से विल्कुल पश्चिम में वम्बई प्रदेश का सालेर और इससे करीव दस मील पूर्व में मुल्हेर का किला मुख्य है।

‡ रिवाइज़्ड लिस्ट अन्टिक्वेरियन रिमेन्स, वाम्बे प्रेसि०, पृ० ९८

¶ जोधपुर राज्य में; देखिए—राजपूताना गजेटियर (इम्पीरियल गज़ट इण्डिया, प्राविन्शियल सिरीज) पृ० २०३; हेमचन्द्राचार्य ने भी अपने द्वयाश्रय महाकाव्य के सर्ग २० पद्य ३३ में पल्लिदेश का उल्लेख किया है परन्तु उसका अभिप्राय भी राजपूताने के तन्नामक प्रदेश से है।

§ ब्रिग्स, जि० ४, पृ० ६४; कै० हि० इ०, जि० ३, पृ० ३०९, बेले पृ० २०६

ल्मुल्क और क़ैसरख़ाँ के आधीन किया गया था। परन्तु, इसमें सन्देह है कि यह हमला कभी हुआ भी था या नहीं। इसके विपरीत यह कहा जाता है कि महमूद के अधिकार में गोधरा नाम का एक अलग ही प्रान्त था जिसका सूबेदार क़ुवाम-उल-मुल्क था*। कुछ भी हो, इस (पल्ली) देश में दुर्ग-निर्माण का प्रश्न इस स्थान पर हल नहीं हो सकता है।

पावकदुर्ग (१९) ही पावागढ़ का पहाड़ी किला है जो बम्बई प्रान्त के पंचमहाल जिले में गोधरा से २५ मील दक्षिण में और सड़क द्वारा बड़ौदा† से २९ मील पूर्व में स्थित है। यहाँ के शासकों के एक शिलालेख में इसका नाम पावागढ़ भी दिया है।‡

महमूद से पहले अहमदशाह और उसके पुत्र महम्मदशाह ने इस दुर्ग को लेने के लिए प्रयत्न किये थे परन्तु वे सफल नहीं हुए। एक लम्बे घेरे के बाद १४८४ ई० के नवम्बर मास में इस किले पर हमला करने और इसके दरवाजे तोड़ देने में सफलता मिली। कहते हैं कि पहाड़ी पर अधिकार प्राप्त करने के बाद महमूद ने ऊपर और नीचे के दोनों किलों¶ में रक्षकों के दल को और भी मजबूत कर दिया और वहाँ पर महमूदाबाद नामक शहर बसाया जो महमूदाबाद चाँपानेर§ भी कहलाता था। प्रस्तुत शिलालेख में इन कार्यों की ओर इतना ही कह कर लक्ष्य किया है कि महमूद ने उस देश पर राज्य किया।

जीर्ण (दुर्ग) से आधुनिक जूनागढ़ का अभिप्राय नहीं है बल्कि यहाँ पर बनाये गये किलों में से एक का है जिनका हाल मुसल्मान इतिहासकारों ने लिखा है और दूसरे शिलालेखों में भी जिनका उल्लेख मिलता है। उक्त आधारों से विदित होता है कि १५वीं शताब्दी में यहाँ पर दो किले‖ और एक शहर था। शहर का नाम सम्भवतः गिरिनगर** था जैसा कि इससे पूर्व क्रमशः दूसरी†† और आठवीं‡‡ शताब्दियों में मिलता है। शहर का किला जो दामोदर घाट¶¶ के किनारे पर गिरनार (रैवत पर्वत) की ढाल पर बना

---

* ब्रिग्स, पृ० ६२

† बाम्बे गज़ेटियर, जि० ३, पृ० १८५ नो० १

‡ वही; पृ० २१७ नो० ३,४

¶ पावागढ़ की पहाड़ी और किले का नकशा देखिये, बाम्बे गजे०, जि०३,पृ० १९६,

§ फरिश्ता, जि० ४, पृ० ७; बर्ड, पृ० २१२; फरीदी, पृ० ६७; कैं० हि० इ०, जि० ३, पृ० ३१०

‖ फरीदी, पृ० ५२, ५४; बर्ड पृ० २०८

** ब्रिग्स (फरिश्ता), जि० ४, पृ० ५२, ५३ "महमूदशाह......गिरनाल देश की ओर (चला) जिसकी राजधानी का भी यही नाम था।"

†† रुद्रदामन का शिलालेख, ब्रिग्स, जि० ८, पृ० ४५

‡‡ जयभट्ट का दानपत्र (इण्डि० एण्टि०, भा० १३, पृ० ७८ पंक्ति १९)

¶¶ ब्रिग्स, जि० ४, पृ० ५३

हुआ है जीर्णदुर्ग,* झिंझरकोट† अथवा जूनागढ़‡ कहलाता था। इसीको शायद आजकल ऊपरकोट¶ कहते हैं। वास्तव में, यह परकोटे से घिरा हुआ राजमहल था। यह मुग़लों की गढ़ियों जैसा था और सम्भवतः इसको गिरनार के चूड़ासमा राजाओं ने बनवाया था। दूसरा किला पहाड़ के ऊपर बना हुआ था§ और अव उसके कोई भी चिह्न अवशिष्ट नहीं हैं। इस पर्वत का प्राचीन नाम रैंवत अथवा ऊर्जयन्त (उज्जयन्त) से बदल कर गिरिनगर के आधार पर गिरनार होना और शहर का नाम जीर्णदुर्ग अथवा जूनागढ़ में बदल जाना सम्भवतः १५ वीं शताब्दी के बाद की बात है।

रैंवतक गिरनार पर्वत का ही दूसरा नाम प्रतीत होता है। इसी स्थान पर मिले हुए एक शिलालेख में इस पर्वत का नाम ऊर्जयत्‖ लिखा है। स्कन्दगुप्त** के लेख में ये दोनों ही नाम मिलते हैं। फ्लीट साहव का मत है कि गिरनार की दो पहाड़ियों में से एक का नाम रैंवतक है न कि खास गिरनार††ही का। इसके बाद १३०० ई० तक का कोई शिलालेख सम्बन्धी प्रमाण अवतक‡‡प्राप्त नहीं हुआ है। इसके बाद के शिलालेखों में रैंवत

---

* मल्लदेव का चोरवाड़ का लेख वि० सं० १४४५ (रिवाइज्ड् लिस्ट एण्टि० रिमेन्स बाम्वे प्रेसि०, पृ० २५०; ब्रिग्स, जि० २१, परिशिष्ट पृ० १०३ सं० ७३१; थेपक राजा मेहरा के हथसनी के लेख; इण्डि० एण्टि०, भा० १५, पृ० ३६०; वही० भा० १६, परि० पृ० ९८

† रिवाइज्ड् लिस्ट बाम्वे प्रेसि०, पृ० ३६१ लेख क्र० ३५ पंक्ति ६

‡ ब्रिग्स, जि० ४, पृ० ५३

¶ यह हिन्दू ढंग का वना हुआ और सम्भवतः १३वीं अथवा १४वीं शताब्दी का है या इससे भी पहले का हो सकता है। (आर्कियालॉजिकल सर्वे वेंस्टर्न इण्डिया, भा० २, पृ० १५)

§ फ़रिश्ता (ब्रिग्स, जि० ४, पृ० ५३) "पहाड़ पर......दृढ़तम किला"।

‖ रुद्रदामन का लेख (ब्रिग्स, जि० ८, पृ० ४२)

** गुप्तकालीन लेख, कॉ० इं० इं०, भा० ३, पृ० ६०

†† वही पृ० ६४ नो० १; "ऊर्जयत् अथवा गिरनार के सामने का पहाड़।" परन्तु 'बाम्बे गजेटियर' जि० ८, पृ० ४४१–४२ में लिखा है कि रेनतकुण्ड (जो दामोदर कुण्ड भी कहलाता है) के ठीक ऊपरवाले पर्वत को ही रेवताचल कहते हैं। इसका नाम रेवताचल, राजा रेवत के नाम पर पड़ा है। कहते हैं कि अपनी पुत्री रेवती का विवाह श्रीकृष्ण के बड़े भाई बलदेव के साथ करने के बाद राजा रेवत द्वारका से गिरनार आकर रहने लगा था। भागवतपुराण के स्कन्ध १० अध्याय ५२ में इस कथा का उल्लेख है। वहाँ रेवत को आनर्तराज लिखा है परन्तु यह नहीं लिखा है कि वह गिरनार जाकर रहने लगा था।

‡‡ जौनपुर के ईश्वर वर्मन् के शिलालेख में रेवतक का उल्लेख है। गुप्तकालीन लेख कॉ० इं० इं०, भा० ३, पृ० २३०

और उज्जयन्त‡पर्वत को एक ही बताया गया है। इससे ऐसा प्रतीत होता है कि पूर्व समय में गिरनार की दो भिन्न-भिन्न पहाड़ियों के नाम रैवत और उज्जयन्त थे परन्तु बाद में वे एक ही पर्वत¶के नाम हो गए। अतः प्रस्तुत शिलालेख में उल्लिखित रैवतक से उस पर्वत का अभिप्राय है कि जिस पर मन्दिर आदि बने हुए हैं और जो गिरनार के नाम से प्रसिद्ध हैं।

‡ देखो नेमीनाथ के मन्दिर से प्राप्त लेख सं० १४ (रिवाइज्ड लिस्ट बाम्बे प्रसि०, पृ० ३५५) और मल्लदेव का चोरवाड़ का लेख पृ० २५०। माण्डलिक राजा के एक लेख में दोनों नाम हैं परन्तु यह स्पष्ट नहीं है कि ये दोनों नाम एक ही के हैं अथवा भिन्न भिन्न पर्वतों के। (पृ० ३४७-४८)

¶ बाम्बे गजेटियर, भा० ८, पृ० ४४१ "जैन लोग कभी कभी गिरनार को ही रेवताचल कहते हैं, परन्तु यह ग़लत है।"

शिलालेख का पद्य विवरण

पद्य सं०	१, १०, २६	आर्या
,,	३, ११, १२, १६ से १८, २०, २२, २३	अनुष्टुप्
,,	५, ६	इन्द्रवज्रा
,,	४, १३, १४, १५, २५	उपजाति
,,	२	स्रग्धरा
,,	७ से ६, १६, २१, २४	शार्दूलविक्रीडित

राजविनोद महाकाव्य में वर्णित प्रसिद्ध व्यक्तियों एवं स्थानों आदि की सूची

---

* मांडू